रसिक दोउ निरतत रंग भरे।
रास कुंज में रास मंडल रचि, जनक लली रघु लाल हरे।।
अमित रूप धरि करि कछु चेटक, जुग जुग तिय मधि श्याम अरे।।

❀ श्रीराम विहारिणी विहारिणौ विजयेते ❀

रसिकाचार्य्या शिरोमणि श्रीमती

रसमोदलताजू

विरचिता

महारास लीला

सम्पादक—

शत्रुहन शरण

प्रकाशक—

श्रीरामप्रिया शरण जी 'पञ्जाबी'

प्रथमावृत्ति ५००] [निछावर मानसिक भावना

चैत्र पूर्णिमा, सं० २०२८ वि०

सीताराम सीताराम सीताराम

❋ श्रीरास विहारिणी विहारिणौ विजयेते ❋

रसिकाचार्य्या शिरोमणि श्रीमती

रसमोदलताजू

विरचिता

महारास लीला

सम्पादक—

शत्रुहन शरण

प्रकाशक—

श्रीरामप्रिया शरण जी 'पञ्जाबी'

प्रथमावृत्ति ५००] [निछावर मानसिक भावना

चैत्र पूर्णिमा, सं० २०२८ वि०

सीताराम सीताराम सीताराम

❀ श्रीमत्यै रसमोदलतायै नमः ❀

भूमिका

"भजामि सरयूतीरमाश्रितं रघुनन्दनम्।
सीतासह महारास रसिकं नटिनं हरिम् ॥"

श्रीअयोध्या विहारिणी विहारी जू की समस्त सम्प्रयोग प्रक्रियाओं में रास विहार का स्थान अन्यतम है। रसराज के साथ साथ इसके अधीनस्थ समस्त रसों का एकत्र रसास्वादन रास ही में सम्भव है। "रसानां समूह इति रासः" रास शब्द की व्युत्पत्ति से भी यही चरितार्थ होता है।

नायक नायिकाओं के नृत्य गान, हाव भाव प्रदर्शन आदि कायिक, वाचिक उद्दीपन पराकाष्ठा को अतिक्रमण कर इन्हें अपार महा रस सिन्धु में निमग्न करा देते हैं। तभी तो रसिक चूड़ामणि श्री जानकीरमण स्वयं श्रीमुख से अपनी प्रियतमा श्री विदेहनन्दिनी जू के प्रति कहते हैं-"अमित प्रियाजू अतिहित रास लीला सुख, ता के बिनु मेरो मन रहत मलीन है।" श्रीरसिकप्रकाश भक्तमाल।

अष्टयाम भावना परायण भावुकों को भी रास लीला चिन्तन में अपरिमित रसानन्द की अनुभूति होती है। किन्तु

रास की सुविधि भावना में रसाङ्गों का परिज्ञान अनिवार्य्य रूप से आवश्यक है। खेद है कि हम लोगों को रस विषयक रीति ग्रन्थों के अध्ययन मनन की ओर समुचित रुचि नहीं है।

इसी विचार से प्रस्तुत प्रवन्ध रचयिता हमारे वन्द्यपादाम्बुज श्रीसद्गुरुदेव जू ने कृपा पूर्वक इस प्रवन्ध के प्रारम्भ में सखियों के सम्वाद रूप में प्रायः समस्त रसाङ्गों का संक्षेप रूप से दिग्दर्शन कराया है। नायक नायिका भेद; यूथेश्वरी, सखी, दूती भेद; भाव, विभाव, अनुभाव, सात्त्विक भाव आदि रसाङ्ग तथा विप्रलम्भ एवं सम्प्रयाग के भेद सरलभाषा में सुबोध रीति से समझाने की सफल चेष्टा की गई है। सम्वाद में जो पारिभाषिक विषयों के लक्षण क्लिष्टबोध समझे गये हैं, उनके उदाहरण रासकालीन सम्वादों में पिरो दिये गये हैं, जिससे विषय अधिक स्पष्ट हो गये हैं।

महारास का क्रम भी प्रस्तावना से लेकर उपसंहार तक ऐसा सुसज्जित है कि सामान्य भावुकों को इतने ही से रास ध्यान की समस्त सामग्रियाँ एकत्र ही उपलब्ध हो जायेंगी। महारास की रीति है कि श्रीरासविहारी जू अमित प्रकाश रूप प्रगट कर प्रत्येक नायिका के साथ मिलकर नृत्य गान करते हैं एवं उसके अंग स्पर्श सुख का भी साथ साथ आस्वादन करते रहते हैं। यह आपका दक्षिण नायक स्वरूप है। तथा स्वयं रूप से पट्ट महिषी श्रीमिथिलेशराजनन्दिनी जू के साथ रास

विहार में लम्पट रहते हैं। यह आपका अनुकूल नायक स्वरूप है। प्रस्तुत प्रवन्ध में इन उभय पहलुओं पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है।

भूमिका लेखन में अधिक न कहकर, हम पाठकों से आग्रह करेंगे कि आप स्वयं सावधानी पूर्वक इस प्रवन्ध का गम्भीर अध्ययन एवं मनन करें। इसकी उपादेयता आपका हृदय स्वतः बता देगा।

यह महारास लीला श्रीकनक महल के जगमोहन में प्रवन्ध लेखक की सत्प्रेरणा से मैनेजर श्रीयुत बाबू मुक्ताप्रसाद जी के तत्वावधान में श्रीसीताराम नित्य विहार लीला मंडली के द्वारा सं० १६६४ कातिक बदी ११ शनिवार के अर्द्धरात्रि काल में हुई थी। इस लीला अभिनय का दर्शकों के हृदय पर ऐसा गम्भीर प्रभाव पड़ा कि वे महीनों तक भावमग्न बने रहे। इस लीला अभिनय के प्रत्यक्षदर्शी अभी तक उसका स्मरणकर भाव विभोर हो जाते हैं। अब प्रवन्ध के अनुरूप भावना करके भाव मगन होना पाठकों के बाँटे में है।

प्रस्तुत प्रवन्ध का समस्त मुद्रण व्यय अकेले श्रीरामप्रिया शरण जी पंजाबी वहन कर रहे हैं। शारीरिक श्रमदान के पुण्यभागी परमगुरुनिष्ठ गुरुवन्धु श्रीनृपनन्दन शरणजी हैं। इसमें आये हुये पदोंके राग रागिनियों का निरूपण गायनाचार्य्य श्रीमैथिलीरमण शरण (महाबीरदास) जी ने किया है। अतः हम पाठकों की ओर से इन तीनों उपकारकों को भूरिशः

धन्यवाद देते हैं। इन्हीं उदार महानुभावों की कृपा से आज हमें श्रीसद्गुरुदेव जू की इस अनुपम सत्कृति की सुगम उपलब्धि हो रही है।

पाद टिप्पणी जहाँ तहाँ इन पंक्तियों के लेखक की जोड़ी हुई है। इसने जहाँ तहाँ पाठ संशोधन करने की अनधिकार चेष्टा भी की है, जिसके लिये यह स्वयं लज्जित है! क्योंकि ब्रह्मवाणी में प्राकृत बुद्धि का प्रयोग बुधजनों के बीच हास्यास्पद है। "छमहहि सज्जन मोरि ढिठाई।"

श्रीरसमोदकुञ्ज
चैत्र पूर्णिमा सं० २०२८

श्रीमती रसमोदलता चरणारविन्द
चञ्चरीक
शत्रुहन शरण

* शुद्धाशुद्धि पत्र *

क्रमाङ्क	पृष्ठाङ्क	पंक्ति संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	१९	आलिगित	आलिंगित
२	३	१७	प्रिव	प्रिय
३	१२	२	आहर्निश	अहर्निश
४	१२	२२	आभिप्राय	अभिप्राय
५	१२	२४	अवस्श्रा	अवस्था
६	१८	४	पोषित	प्रोषित
७	१९	३	५ नयिक	१५ नायिका
८	१९	८	मे	भेद
९	२१	१०	प्रख ा	प्रखरा
१०	२२	१०	अभितार्था	अमितार्था
११	२२	१८	वणन	वर्णन
१२	२८	५	शङ्कर	शक्कर
१३	३२	५	धर्य	धैर्य
१४	३२	११	शृङ्गार	शृङ्गार
१५	३७	१	आत	अति
१६	३८	८	की	को
१७	४०	२	बहुन	बहुत
१८	४५	१८	जान क	जान कै
१९	५५	१९	में असहिष्णुता	में निमेष असहिष्णुता
२०	६२	२०	मादक उन सबों	मादक आसवों
२१	६७	१४	स्वीकारय	स्वीकार्य
२२	७३	१	देऊ	देऊँ

* सूची-पत्र *

क्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
१	ग्रन्थारंभ का मङ्गलाचरण	१
२	श्रीयुगल मन भावन जू का रासचौक शुभागमन	५
३	रासारंभ का मंगलाचरण	७
४	झाँकी का पद	७
५	श्रीप्रियाप्रियतम का अन्योक्ति विलासमें युगलस्वरूप वर्णन	८
६	श्रीप्रियाप्रियतम रस माधुरी	१४
७	नायिका भेद	१६
८	यूथेश्वरी भेद	२०
९	सखी भेद	२१
१०	दूती भेद	२२
११	उद्दीपन विभाव	२४
१२	स्थायिभाव	२७
१३	अनुभाव एवं बीसो यौवनालङ्कार वर्णन	३०
१४	सात्विक भाव	३३
१५	सञ्चारी भाव	३४
१६	नायक भेद	३४
१७	चारो विप्रलम्भ शृङ्गार	३७
१८	चार प्रकार के सम्भोग	३८
१९	महारास प्रस्तावना	३९
२०	रासारम्भ	४२
२१	श्रीप्रिया प्रियतम जू का सम्वादात्मक गान	४३

क्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
२२	दक्षिण नायक लीला	४५
२३	स्नेह का उदाहरण	४८
२४	धीरा मध्या नायिका का उदाहरण	४९
२५	अधीरा प्रगतन्भा यायिका का उदाहरण	५१
२६	राग का उदाहरण	५२
२७	अनुराग का उदाहरण	५३
२८	रूढ़ महाभाव का उदाहरण	५५
२९	श्रीप्रिया प्रियतम एवं सखियों के सम्वादात्मक गान	५७
३०	रास में चौपर खेल विनोद	६१
३१	मादन अधिरूढ़ महा भाव का उदाहरण	६३
३२	युगल नर्म परिहास	६६
३३	उपसंहार	७१
३४	विसर्जन आरती, मंगलानुशासन एवं महल प्रस्थान	७३

❀ श्रीजानकी रमणो विजयतेतराम् ❀

❀ श्रीरास विहारिणी विहारिणौ विजयेते ❀

महारास लीला

मङ्गलाचरण

नव राग भराञ्चितात्म वृत्तेः सरयू कुञ्ज गृहेषु राघवस्य ।
जनकात्मजया समं समन्ताद्विजयन्ते रति केलयोऽनवद्याः॥ १
विद्युत्पुञ्ज तनुप्रभां जनकजां रामाम्बुदालिङ्गितां,
मुक्तारत्न सुमाल्य भूषण युतां सच्चित्र नीलाम्बराम् ।
लीला लोल सुकञ्ज मञ्जुलकरां श्रीपूर्णचन्द्राननां,
वन्दे रास विहारिणीं प्रिय सखी लीलादिभिस्सेविताम्॥ २॥

श्लोकार्थ—नित्य नूतन प्रियानुराग भार से सत्कृत चित्त-वृत्ति वाले श्रीराघव जू की श्रीजनकराजनन्दिनी जू के साथ श्रीसरयू कुञ्ज गृहों में होने वाली निर्दोष सच्चिदानन्दमयी केलियाँ निरन्तर विजय को प्राप्त हों ॥ १ ॥

श्रीजनकराजनन्दिनी जू के श्रीविग्रह में कोटि कोटि बिजली के समान प्रकाश है। आप रत्न मोती के भूषणों एवं मालाओं से अलङ्कृता हैं। सुन्दर हस्त कमल में क्रीड़ा कमल घुमा रही हैं। संपूर्ण चन्द्रमा के समान शोभायमान आपके श्रीमुख मंडल है। घनश्याम राघव जू से आलिंगित हैं। लीलादिक प्यारी सखियाँ आपकी सेवा में तत्पर हैं। ऐसी रास विहारिणी सिया स्वामिनी जू की मैं बन्दना करता हूं ॥२॥

स्मरावेश कलं चित्तं नाट्य गीतोत्सुकं परम् ।
अनन्त सखिभिर्युक्तं रामचन्द्रं भजाम्यहम् ।।३।।
मंदस्मिताधर सुधारस रञ्जितोष्ठं,
लोलका वलित मुग्ध कपोल देशम् ।
पादाम्बुज प्रथित ताल विधान नृत्यं,
रास स्थितं रघुपतिं सततं भजामः ।।४।।
आह्लादिनी शक्ति रूपा जानकी यस्य वामतः ।
तं रामं सच्चिदानन्दं नित्यं रासेश्वरं भजे ।।५।।

श्लोकार्थः—कामावेश से जिनका चित्त परिपूरित है, जो रास में नृत्य गान करने कराने को उतावले हो रहे हैं, जो अनन्त सखियों से परिवारित हैं, ऐसे श्रीरामचन्द्र जू का हम भजन करते हैं ।। ३ ।।

रासविहारी रघुनन्दन जू का ओठ मंद मुसकान युक्त प्यारी अधर सुधा रस पान कर अनुरञ्जित हो रहा है । आपके गोल कपोल पर अलकावलि छहरा रही है । श्रीचरणों से नृत्य का तालविधान प्रगट कर रहे हैं । हम तो उसी रास रसिया का सदा भजन स्मरण करते हैं ।। ४ ।।

आह्लादिनी शक्ति स्वरूपा श्रीजनकराजनन्दिनी जू जिनके वाम भाग में सुशोभित हो रही हैं, उन्हीं नित्य रासेश्वर सच्चिदानन्द कन्द रघुनन्दन का हम निरन्तर भजन करते हैं ।। ५ ।।

रसिकानां महच्छ्रेष्टं रास गीतोत्सुकं परम् ।
रसाचार्यं कपिं ध्येयं वन्दे श्रीवायुनन्दनम् ॥६॥
वन्दे चन्द्रकलां शरच्छशिमुखीं शोणारविन्देक्षणां,
भक्तानांभय नाशिनीं करुणाया संकल्प सिद्धि प्रदाम् ।
श्री रामेष्टकरीं जनकजा वामे सदा संस्थितां,
सर्वाशा परिपूरिणीं प्रियतमां देवीं भजे शर्मदाम् ॥७॥

श्रीपवननन्दन हनुमतलाल जू रसिकों में महान श्रेष्ठ हैं। आप रासोचित नृत्य गान के लिये अतिशय समुत्सुक रहा करते हैं आप रसाचार्य हैं। भाविकों के लिये ध्येय हैं। आपकी हम बन्दना करते हैं ॥ ६ ॥

श्रीचन्द्रकलाजी का शरद शर्वरीश के समान शोभाय-मान श्रीमुख है। अरुण कमल के समान आपके अनुरागी नयन हैं। आप भक्तों के भय मिटाने वाली हैं। करुणा पूर्वक आश्रितों के मनोरथ पूर्ण करती रहती हैं। श्रीप्रियतम का प्रिय करने वाली है। श्रीमैथिली जू के वाम भाग में आपकी नित्य स्थिति है। सब आशा को पुराने वाली, सब सुख देने वाली, अतिशय प्रिव सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का हम भजन करते हैं ॥ ७ ॥

अयोध्या ध्यान गम्या सा सप्त पूर्यधिकारिणी ।
भगवानाद्य पुरुषो रमते यत्र चाद्यया ॥ ८ ॥
न चन्द्रस्य गति स्तत्र न सूर्य्यस्य गतिस्तथा ।
प्रभया रामचन्द्रस्य सीतायाश्च प्रभावतः ॥ ६ ॥
सदा प्रकाशतेत्यर्थं स्थलं परम शोभनम् ।
यद्ध्यात्वा निमिषार्द्धेण रसिका यान्ति तत्पदम् ॥१०॥

श्लोकार्थ—सातों मोक्षदायिनी पुरियों की स्वामिनी श्री-अयोध्या ध्यान ही के द्वारा प्राप्त होने वाली हैं। यहाँ आदि पुरुष श्रीरघुनन्दन अपनी आद्या शक्ति श्रीमैथिली जू के साथ रमते रहते हैं ॥ ८ ॥

श्रीसीतारामजी की अत्यधिक प्रकाश राशि के समक्ष श्रीअयोध्या में सूर्य्य चन्द्रमा की गति नहीं है ॥ ६ ॥

श्रीअयोध्या का यह परम शोभायमान स्थल अपने ही प्रकाश से अत्यन्त प्रकाशित रहता है। आधे निमेष के लिये भी श्रीअयोध्या का ध्यान कर लें, तो रसिक जन उस दिव्य देश को प्राप्त कर लेते हैं ॥ १० ॥

साकेते सरयू तटे मणि भुवि श्रीजानकीवल्लभं,
कुञ्जे पुष्पमये प्रमोद विपिने नित्यं सखीभिर्युतम्।
वाक्यै र्हास्य युतैः कटाक्ष मधुरै स्सम्मोदयंतं प्रियां,
क्रीड़न्तं मधुरं कदा रघुवरं द्रक्ष्याम्यहं चक्षुषा ॥११॥

(लीला प्रारम्भ में आचार्य वन्दना दोहावली का गान होना चाहिये, जो 'रास में मालिनी लीला' के प्रारम्भ में छप चुकी है ।)

श्रीयुगल मनभावन जू श्रृंगार कुंज से रास चौक में आ रहे हैं। आगमन दृश्य के वर्णन में सखियों का पद गान।

❋ राग केदारो ❋

आजु सिया लाल रास मंडल चलि आवैं ।
अरस परस अंसन भुज दिन्हें मुद छावैं ॥
हँसि हँसि बतरात वदन बीटिका चबावैं ।
अंग अंग भूषन लखि मदन रति लजावैं ॥
आस पास सखि समाज मधुर सुरन गावैं ।
'रसिकअली' बीनादिक जंत्र लै बजावैं ॥

श्रीअयोध्या सरयू तट की मणिमयी भूमि है। श्रीप्रमोद-बन का पुष्प कुञ्ज है। यहाँ नित्य सखियों से परिवारित श्री-जानकी वल्लभ जू अपनी प्राणप्रिया श्रीजनकराजदुलारी जू को हास विलास मय वचनों से तथा मधुर कटाक्षों से मोद विनोद प्रदान कर रहे हैं। ऐसी माधुर्य क्रीड़ा करने वाले श्रीरघुवर के दर्शन इन नयनों से हमें कब होंगे ? ११ ॥

* आगमन दृश्य का दूसरा पद *

(रागिनी बरवा)

क्या साँवला प्यारा भी झमकता चला आता ।
बहु काम जिसको देखि के सरमिन्दगी खाता ॥
रस माधुरी बरसाय के सखियों को लुभाता ।
मोतिन जड़े सिरताज सुभग सिर पै सुहाता ॥
अलकैं सुछवि छलकैं कपोलन पै दुहूँ ओरी ।
कानों में कुंडल चन्द्र मंडल पै चला आता ॥
नयनों में सुरमें सोहते नासामनी हलती ।
गजमोतियों के माल गले बीच राजता ॥
कटि किंकनी झंकार वसन पीत सुहाता ।
पाँवों में नूपुर धारि गति गयंद लजाता ॥

(युगलकिशोर सिंहासन पर विराज गये । सखियाँ छत्र चँवरादि सेवा सौज लिये खड़ी हैं, श्रीरास कुंजेश्वरी युगल का पूजन कर रही हैं ।

* व्यास द्वारा उस दृश्य का गान, दोहा *

करि सिंगार प्रीतम प्रिया, बैठे दै गलबाँह ।
निज निज सौज लिये अली, निरखति प्यारी नाह ॥
सखित सहित कुंजेश्वरी, पूजन करि हर्षाय ।
धूप दीप नैवेद धरि, आरति करि वलि जाय ॥

* सखियों के द्वारा रासारंभ का मंगल गान *

(रागिनी झिंझुरा)

जय जय श्री बन प्रमोद रसिकन सुखदाई ।
सरजु तीर दिव्य भूमि, वेलि लता रही झूमि,
फूलन प्रति भँवरा अति, गुंजत मन भाई ।
कुंज कुंज प्रति अनूप, विलसत तहँ जुगल रूप,
जनकलली रघुनन्दन, मधुर मधुरताई ॥
चन्द्रकला बिमलादिक, नागरी नवीनी अति,
मधुर जंत्र लीने कोइ, सप्त स्वर जमाई ॥
गावहिं सब दिव्य तान, सुनहिं लाल अति सुजान,
राग सरस भींजि मंद, मंद मुसुकाई ।
'अग्रअली' विपिन राज, यह सुख तहँ नित समाज,
जानत कोइ रसिक भेद, जिन यह रस पाई ॥

* व्यास द्वारा झाँकी पद गान सखी का नृत्य *

(राग देश)

बैठे जुगल छबीले । रस रहस मे रसीले ॥
अली भली पिय प्यारी । राजे सनेह वारी ॥
निरखैं अनूप जोरी । नव प्रेम रंग बोरी ॥
अँग अंग साज साजे । बाजे विविध विराजे ॥
नाचे नवीन नारी । ललि लाल मोद कारी ॥

छवि छटा छिटकि चहुँ ओरी। सखि निरखि २ भइ भोरी ॥
अलि 'हेमलता' मतवारी। तन मन धन सब बलिहारी ॥
भावै नहिं बात विकारी। चढ़ि नैनन मदन खुमारी ॥

❋ अथ प्रिया प्रियतम अन्योक्ति विलास ❋

❋ व्यास गान दोहा ❋

नायक राज सिरोमनी, काम कला गुन पार।
रस सिंगार के मूल हैं, श्रीअवधेस कुमार ॥
वन असोक के मध्य में, प्रान प्रिया के संग।
सखियन जुत रसकेलि में, करते नाना रंग ॥
पुनि दोऊ व्यंगोक्ति से, करत वचन व्यवहार।
सुनि सुनि सखियन हिय खिले, तन मन दुहुँ पर वार ॥
पिय बोले सुनिये प्रिये, देखी अचरज आज।
अदभुत लता सुबीच में, सो वरनों सुख साज ॥

श्रीप्रियतम जू का सम्वाद—

हे श्रीप्राणप्यारी जू! मैं एक विलक्षण लता को देख, आश्चर्य को प्राप्त हो, आपको वह वृत्तान्त सुनाता हूं। सुनिये। उस लता के मध्य में सात कमल हैं। उनमें दो कमल अपनी मादक सुगन्ध दरसाकर, एक प्रवल पुरुष को वश किये रहते हैं। ये दोनों कमल खेचर, वनचर और जलचर युक्त हैं। उस लता में दो कन्दरायें हैं। उनमें दो द्वार हैं, द्वारों पर दो चन्द्रमा का पहरा है। पुनः युगल कन्दराओं के मध्य एक कमनीय

चन्द्रमा है। इस चन्द्रमा के दोनों ओर दो नागिनी हैं। पुनः चन्द्रमा के मध्य षटपदों की दो पंक्तियाँ हैं। उभय भ्रमर पंक्तियों के मध्य एक विद्रुममणि है। वह अति प्रकाश कर रही है। उसके नीचे एक शुक है। वह बोलता नहीं, उस शुक के मुख में दैत्य गुरु बैठे हैं। पुनः उस शुक के अधोभाग में एक विम्वाफल है। सामान्य विम्वाफल तो कटु होता है, परन्तु यह विलक्षण विंवाफल अमिय रसमय है। इस अद्भुत विम्वाफल को शुक ग्रहण तो करना चाहता है, पर उसकी पकड़ में नहीं आता। अमृत के लोभ से उड़ता भी नहीं। आश्चर्य तो यह है कि उस विम्वाफल के भीतर दाड़िम बीज की दो पंक्तियाँ हैं। पुनः उस विम्वाफल के नीचे एक वर्तुलाकार सुरम्य वेदी है। उस पर शनि का छौना विलस रहा है।

उस आश्चर्यलता के मध्य युगल स्वर्ण शैल शिखरों पर दो ध्यान निष्ठ शंकर विराजे हैं! उभय शंकरों पर दो नागिनी चमकती हैं। उस शंकर को पूजने के लिये, बाहर से एक श्याम शेष अति आतुरता से आता है, तब उस लता में स्थित सात कमलों में एक, उस शेष का गला पकड़ कर उसे झकझोर कर फेंक देता है। बहुत अनुनय करने पर, तब कहीं पूजने देता है।

हे श्रीप्राणप्यारी जू! और शेष के मुख का कंठ प्रदेश तो मोटा होता है, पर इस विलक्षण श्याम शेष का कंठ पतला है। मोटाई पूंछ की ओर है। उन नग युत युगल शंकरों के

बीच अनेक रूप दर्शित होते हैं। वे कभी तो नारंगी फलवत्, कभी श्रीफल समान, कभी काम-कन्दुक तद्वत और कभी सुधा-रस परिपूरित स्वर्ण कलश की भाँति दर्शित होते हैं। इन अपूर्व युगल सरस फलों को दर्शाकर, उस लता ने एक अद्वितीय पुरुष को वशीभूत कर लिया है।

पुनः उस लता के मध्य दो रंभ स्तंभ हैं। उभय स्तम्भों के बीच एक अपूर्व मदनशाला है। हे प्यारी, यह आश्चर्य देख मैं तो मुग्ध हो रहा हूं। वह सर्वगुण सम्पन्न अद्वितीय पुरुष उस लता में रात दिन क्यों कर लम्पट रहता है? न मालूम उस लता में क्या स्वारस्य है कि उसे वह छोड़ना नहीं चाहता? उसके दिवारात्रि लम्पट रहने का कारण मुझे कृपया समझा दीजिये।

*** व्यास गान दोहा ***

सुनि वानी पिय की प्रिया, कही मधुर मुसुकाइ।
मैं भी पिय वरनन करौं, जो देखी सुखदाइ॥

श्रीप्रिया जू का सम्वाद—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू! उस लता का नाम तो बताइये।

श्रीप्रियतम जू—

हे श्रीप्राणप्यारी जू! मैं तो नहीं जानता।

श्रीप्राणप्रिया जू का सम्वाद—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू! तब आपने उस लता के स्वरूप

को यथार्थ नहीं पहचाना। केवल मुग्ध ही हो रहे हैं। इसका नाम कुपजा लता है।

हे श्रीप्राणप्रियतम जू ! मैं भी एक कुपज वृक्ष को देखकर आश्चर्य चकित हो, आपको सुनाती हूं। सुनिये ! जितने अवयव उस कुपजा लता में हैं, उतने ही मैंने उस वृक्ष में भी देखे, किंचित भेद भी हैं। उसे भी सुन लीजिये।

उस वृक्ष में नग युत शंकर नहीं हैं। अनंगशाला तो है, पर रूप में भेद है। वृक्ष में मीनाकार है, लता में सरिताकार ! दोनों का रस एक ही है, स्वाद दोनों के भिन्न हैं। उस वृक्ष के संयोग द्वारा जो लता को सुख स्वाद मिलता है, वह वृक्ष से विलक्षण है और लता द्वारा जो वृक्ष को मिलता है, वह लता से विलक्षण है।

हे प्राणनाथ ! सामान्य लता वृक्ष तो स्थावर होते हैं, किन्तु वर्ण्य लता वृक्ष जंगम हैं। वह वृक्ष इतना सुन्दर है कि जब अपने प्रतिबिम्ब को देखता है, तो अपने ही रूप पर मोहित होकर, उस लता का स्वरूपाकार बन जाना चाहता है, जिससे अपने ही मनमोहन रूप का संयोग सुख जो लता को आस्वाद्य है, वह स्वयं भी उसे रसनीय हो। वह लता के भाग्य को सिहाता है कि ऐसे सुन्दर वृक्ष का संयोग सुख उसे प्राप्य है। कहने लगता है कि मेरा ऐसा कहाँ सौभाग्य कि लता वाला सुख स्वाद पाऊं।

इससे हे प्राणनाथ ! उस वृक्ष का आश्चर्य रूप है, कि

अपने रूप में अन्यों का क्या कहना, स्वयं भी मोहित हो जाता है। लता तो वृक्ष के आश्चर्य रूप को देख आहर्निश व्यामोहित रहती ही है। लता का रूप रस भी अलौकिक है, जिससे वह वृक्ष भी दिवारात्रि उसमें लम्पट रहता है। अतः दोनों के रूप अनिर्वाच्य हैं। यों तो लतावृक्ष परस्पर में एक दूसरे के प्रति अनुरक्त हैं ही, पर वृक्ष लता की अपेक्षा उसमें अधिक लम्पट है। इसका कोई विशेष कारण है। उसे दत्तचित्त होकर सुनिये।

लता वृक्ष का पहले एक ही अनिर्वचनीय अद्वैत स्वरूप था। उस स्वरूप का निरूपण वाणी का विषय नहीं है। परन्तु उस स्वरूप में उसे नीरसता का अनुभव हुआ। उस आनन्द राहित्य स्वरूप से ऊबकर वही अद्वैत तत्व लतावृक्ष द्विधा रूप में विभक्त हो गया। ❋

❋ यहाँ निम्नलिखित 'श्रुति सिद्धान्त का संकेत है।

"सवै नैव रेमे तस्मादेकाकी न रमते स द्वितीय मैच्छत्......
स इममेवात्मानं द्वेधा पातयत्ततः पतिश्च पत्नी चाभवताम्।"......
वृहदारण्यक० १।४।३)

अर्थात्–वह ब्रह्म पहले अकेला था; वह रमण नहीं करता था। इसी कारण आज भी एकाकी पुरुष रमण नहीं करता। उसने दूसरे की इच्छा की। उसने अपने को ही एक से दो कर दिया। वे पति पत्नी हो गये।

इसका अभिप्राय यह नहीं कि इसके पूर्व वे अकेले थे और अकेले में रमण का अभाव प्रतीत होने के कारण वे युगल हो गये। क्योंकि काल परम्परा के क्रम से अवस्था भेद को प्राप्त हो जाना ब्रह्म के लिये सम्भव नहीं है। वे नित्य मिथुन हैं और इसी नित्य युगलत्व में उनका पूर्ण एकत्व है। (कल्याण, उपनिषद अङ्क पृ० १३०)

अब दोनों को परस्पर अवलोकनादि में अपरिमित आनन्द रस की वृद्धि होने लगी। दोनों के अवयव भी एक दूसरे के साथ आनन्द रस आस्वादन करने के निमित्त बराबर ही हैं। केवल किंचित मात्र भेद है। नगयुत शंकर की स्थिति केवल लता में ही है, जो वृक्ष को अत्यधिक आनन्द देने का हेतु है। उस नगयुत शंकर को देखते ही वृक्ष का आनन्द रस उफना उठता है। अतः उसे छोड़ना नहीं चाहता है। यही कारण है कि लता में वृक्ष इतना अधिक लम्पट रहता है। अब आप लता में वृक्ष के अधिक लम्पट रहने का कारण समझ गये होंगे।

श्रीप्रियतम जू—

हे श्रीप्राणप्यारी जू! उस वृक्ष में भी तो शंकर हैं।

श्रीप्राणप्यारी जू—

हाँ प्राणप्यारे जू! वृक्ष में शंकर हैं तो सही, परन्तु उन्हें केवल चिह्न मात्र ही समझिये। नगसे संयुक्त नहीं रहने से, वह मुरझाये रहते हैं। कोई प्रभावोत्पादक नहीं हैं। आनन्द रस की विशेषता तो नग में ही है। लता में नगयुक्त शंकर स्थित रहने से, वृक्ष को उसके द्वारा अधिक रस मिलता है। इसी से तो वह लता में इतना आसक्त रहता है।

श्रीप्राणप्रियतम जू—

हे श्रीप्राणप्यारी जू! अब मैंने अच्छी तरह समझ लिया, परन्तु औरों की समझ यह बात थोड़े आई होगी?

श्रीप्राणप्यारी जू—

हे प्राणप्यारे ! हमारी सखियाँ तो समझ ही गई होंगी। इतर व्यक्तियों के लिये समझना अवश्य कठिन है।

✻ व्यास गान दोहा ✻

व्यंग उक्ति सुनि के पिया, लइ प्यारी भरि अंक।
नाना हाव सुभाव युत, सुख लूटत निःशंक ॥

✿ श्रीप्रिया प्रियतम रस माधुरी ✿

✻ व्यास गान ✻

कोई बोली ससि कले, रँगी जुगल रँग राग ।
पिय प्यारी रस माधुरी, वरनहुँ सहित विभाग ॥

सखी वचन—

हे श्रीमहायूथेश्वरीजी ! हम सब सखियों की आपसे यही प्रार्थना है कि श्रीप्रिया प्रियतम जू की रस माधुरी आपके श्रीमुख से सुनें। इससे हम सब अपने तृषातुर श्रवण को तृप्त करेंगी।

✻ व्यास गान ✻

तब बोली सर्वेस्वरी, धन्य सखी बड़ भाग ।
जो दंपति रस सुनन को, बढ़्यो अधिक अनुराग ॥
सुनो श्रवन मन लाइके, भावऽनुभाव विभाव ।
संचारी स्थाइ पुनि, भेद सकल मैं गाव ॥

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू—

हे प्यारी सखियो ! बहुत प्रसन्नता की बात है, 'जो आज तुम सबों को युगल रस माधुरी पान करने की उत्कण्ठा हुई। अब चित्त देकर श्रवण करो, मैं कहती हूँ।

श्रीप्रिया प्रियतम जू रस रूप हैं। स्थायी भाव, विभाव अनुभावादिकों के संयोग से रस प्रगट होता है।

रति विषय आस्वादन के हेतुभूत वस्तुओं को विभाव कहते हैं। वह विभाव आलंबन और उद्दीपन भेद से दो प्रकार का होता है। पुनः आलंबन विभाव के भी दो भेद होते हैं। एक विषयालंबन, दूसरा आश्रयालंबन ।

अब इन दोनों के लक्षण सुनो। विषय का ग्रहण करने वाला तो आश्रयालंबन होता है तथा जिसके बीच में उस विषय की स्थिति है, वह विषयालंबन होता है।

श्रीप्रिया प्रियतम जू परस्पर में एक दूसरे के प्रति रसालंबन के विषय और आश्रय हैं ।

यथा—श्रीरामचरित मानसोक्त पुष्प वाटिका प्रसंग में– 'देखि रूप लोचन ललचाने।' से लेकर 'अधिक सनेह देह भइ भोरी। सरद ससिहि जनु चितव चकोरी॥' तक श्रीप्राणप्रिया जू आश्रयालंबन हैं और श्रीप्राणप्रियतम जू बिषयालंबन हैं।

पुनः 'कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि।' से लेकर 'देखि सीय सोभा सुख पावा। हृदय सराहत बचन न आवा॥' तक प्रसंग में श्रीप्राणप्रियतम जू आश्रयालंबन हैं और श्रीप्रियतमा जू विषयालंबन हैं।

इनमें श्रीप्रिया जू का स्वरूप यह है कि आप श्रीप्राण-प्रियतम जू की नित्य स्वकीया नायिका हैं, किन्तु रसास्वादन में वैचित्री लाने के लिये समय समय पर आप स्वकीया के अतिरिक्त, परकीया भाव भी प्रगट करती हैं।

अपनी व्याही स्वकीया कहाती हैं, दूसरे की स्त्री पर-कीया कहाती है। दोनों ही मुग्धा, मध्या और प्रगल्भा के भेद से तीन प्रकार की होती हैं। अब इन तीनों के लक्षण सुनो।

जो श्रीप्रियतम के साथ रस व्यवहार वार्त्ताओं में और रस की प्रक्रियाओं में अति संकोच रखती हो, वह मुग्धा कहाती है। इन सब व्यवहारों में ठिठाई वरतने वाली प्रगल्भा कहाती है और जो न अति संकोच ही करे, न ठिठाई ही करती हो, वह मध्या कहाती है। इनमें मध्या मान काल में धीरादि भेद से तीन प्रकार की होती है। १-धीर मध्या, २-अधीर मध्या और ३-धीराधीर मध्या। अब इन धीरादि भेदों के लक्षणों को हमारी सखी रूपलतिका सुनावेगी।

हे रूपलतिके, इन धीरादि भेदों को लक्षण सहित तुम सुनाओ।

श्रीरूपलतिकाजी का सम्वाद—

बहुत अच्छा, मैं आपकी आज्ञा से धीरादि भेदों को सुनाती हूं। हे प्यारी सखियो, दत्तचित्त होकर सुनो।

भिन्न अर्थ वाले शब्दों को दूसरे अभिप्राय से अपने प्रियतम के साथ व्यंग वाणी बोलने वाली, प्रणय अभिमान में निर्भर होकर उन्हें डाँटने वाली एवं डराने वाली धीरा मध्या कहाती है।

बेसम्हाल निष्ठुर बोलने वाली अधीर मध्या कहाती है। व्यंग तथा स्पष्ट दोनों मिलाकर बोलने वाली धीराधीर मध्या कहाती है।

प्रगल्भा भी धीरादि भेदों से तीन प्रकार की होती है। अब इन प्रगल्भाओं के लक्षण सुनों।

अपने क्रोध को छिपाती हुई रति में उदासीन हो वह धीरा प्रगल्भा कहाती है।

जो अपने नायक को निष्ठुर होकर डाँटे और कान के भूषणों से ताड़न करे, वह अधीर प्रगल्भा कहाती है।

जो क्रोध को छिपाती हुई, कुछ डाँट करके बोले वह धीराधीर प्रगल्भा कहाती है।

मुग्धा ऐसे मान काल में केवल क्रोध के मारे रोकर ही मौन हो जाती है। उसमें उपर्युक्त तीनों भेद व्यक्त नहीं होते।

इन भेदों को मिलाकर सात प्रकार की नायिकायें हुईं। पुनः इतने ही भेद परकीया के भी हैं। उन्हें लेकर चौदह प्रकार की हुईं।

अनूढ़ा अर्थात अविवाहिता कन्यका कहाती है। वह प्रायः मुग्धा ही रहती है। उसे मिलाकर पन्द्रह प्रकार की नायिकायें होती हैं।

पुनः इन सबों में प्रत्येक के आठ आठ भेद होते हैं। यथा—१-अभिसारिका, २-वासकशय्या, ३-विरहोत्कंठिता, ४-विप्रलब्धा, ५-खंडिता, ६-कलहंतरिता, ७-स्वाधीन भर्त्तृका और ८-पोषित भर्त्तृका।

(अब उपर्युक्त उपभेद वाली नायिकाओं के लक्षण सुनो)

१—जो स्वयं नायक के पास जाती है, वह अभिसारिका है।

२—जो रमण करने की इच्छा करती हुई, अपनी रतिशय्या एवं रति सहायक वस्तुओं को सजती है, वह वासक शय्या है।

३—जो अपने प्रियतम के क्षण मात्र विरह में व्याकुल हो जावे, वह विरहोत्कंठिता है।

४—जिसका कान्त समय और स्थल बिशेष का संकेत करके भी वहाँ आकर नहीं मिले, वह विप्रलब्धा है।

५—अन्य स्त्री के साथ सम्भोग चिह्नों से लाञ्छित होकर आये हुये नायक पर क्रोध पूर्वक देखने वाली खंडिता है।

६—पहले मानकर प्रियतम से रुष्ट वचन कहकर उन्हें टाल दे। तत्पश्चात् उसके लिये पाश्चात्ताप करे, वह कलहंतरिता कहाती है।

७—जिसका पति पत्नि के अत्यन्त स्वाधीन हो, वह स्वाधीन भार्त्तृका है।

❀ किसी किसी रीतिकार के मत से ९-प्रवस्यत्पतिका नामक उपभेद भी है।

८—जो कान्त के परदेश जाने से विरह दुःख में पीड़ित हो, वह प्रोषितभर्तृका है।

अतः पूर्व कथित ५ नायिक भेदों को इन आठ उप-भेदों से गुणा करने पर १५ × ८ = १२० नायिका भेद हुये।

पुनः इनमें प्रत्येक के उत्तमा, मध्यमा और कनिष्टा इन तीन भेदों को मिलाने से सब मिलकर ३६० नायका भेद हुये।

हे श्रीसर्वेश्वरी जू! आपकी आज्ञा से मैंने संक्षेप में नायिका भे. तथा उनके लक्षण सुनाये। आगे जैसी आपकी आज्ञा।

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का सम्वाद—

हे सखियो! इन सब धीरादि भेदों को भी श्रीप्रिया जू समय समय पर प्रगट करती हैं। यह संक्षेपतः विषयालंवन का परिचय है।

अब सखियों और यूथेश्वरियों के भेदों को श्रीरस-मालिकाजी सुनावेंगी।

हे रसमालिके! तुम यूथेश्वरियों और सखियों के भेदों को कहकर सुनाओ।

प्रवत्स्यत्प्रेयसी, अथवा प्रवत्स्यत्पतिका उसे कहते हैं जो कांत को विदेश गमनोत्सुक देखकर विरह व्याकुल हो उठे।

नायिका भेद का विस्तृत विवरण लक्षण उदाहरणों के सहित पाठक श्रीरसिकअलिजी महाराज विरचित श्रीसीताराम रस चन्द्रोदय नामक ग्रन्थ में पढ़ें।

श्रीरसमालिकाजी का सम्वाद—

बहुत अच्छा ! मैं आपकी आज्ञा से यूथेश्वरियों एवं सखियों के भेद सुनाती हूँ।

❀ अथ यूथेश्वरी भेद ❀

हे प्यारियो, सुनो ! यूथेश्वरियों के तीन भेद हैं। १-अधिका २-मध्यस्था अथवा आपेक्षिकी अधिका और ३-लघु । पुनः इन तीनों के उपभेद भी हैं। अधिका में आत्यन्तिकी अधिका तो एक ही हैं, मध्यस्था के १ प्रखरा, २ मध्या, और ३ मृद्वी तीन भेद हैं। पुनः इन तीनों में प्रत्येक के अधिका, समा और लघु भेद से तीन तीन उपभेद हैं। अतः मध्यस्था, जिन्हें आपेक्षिकी अधिका भी कहेंगे, उनके कुल ६ उपभेद हुये। यथा— १-अधिक प्रखरा, २-अधिक मध्या, ३-अधिक मृद्वी, ४ सम प्रखरा, ५-सम मध्या, ६-सम मृद्वी, ७-लघु प्रखरा, ८-लघु-मध्या और ६ लघु मृद्वी।

अब तीसरी लघु के उपभेद सुनो—

ये दो प्रकार की होती हैं। (१) आपेक्षिकी लघु और (२) आत्यन्तिकी लघु।

इस प्रकार यूथेश्वरियों के कुल द्वादश भेद जानो।

अब इन सबों के लक्षण सुनो—

१-आत्यन्तिकी अधिका वह है जिसके सौभाग्य, रूप, चातुर्य्य आदि गुणों के सदृश्य अन्य कोई भी सखी नहीं है।

उसकी अपेक्षा सब सखियाँ रखती हैं। वह श्रीस्वामिनी जू के व्यतिरेक अन्य किसी की अपेक्षा नहीं रखती हैं। यही सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू हैं। आपेक्षिकी अधिका तो अन्य सबों से अधिका हैं, पर आत्यन्तिकी अधिका श्रीसर्वेश्वरीजी की अपेक्षा लिये रहती हैं।

आपेक्षिकी अधिक प्रखरा वह है, जो आपेक्षिकियों में रूप संभाषण, गुणादि करके सर्व श्रेष्टा हैं।

इनसे न्यून अधिक मध्या हैं, अधिक मध्या से न्यून अधिक मृद्वी है।

इसी प्रकार सम प्रखरा, सम मध्या, सम मृद्वी, लघु प्रखरा, लघु मध्या, लघु मृद्वी आपेक्षिकी लघु और आत्यन्तिकी लघु को क्रमशः उत्तरोत्तर न्यूनातिन्यून समझना।

यूथेश्वरियों में न तो आत्यन्तिकी अधिका से कोई बड़ी है, न आत्यन्तिकी लघु से कोई छोटी। इस प्रकार यूथेश्वरियों के भेद जानों।

❋ अथ सखी भेद ❋

अब सखियों के भेद सुनाती हूं। सखियों के ५ भेद हैं। १–सखी, २–नित्य सखी, ३–प्रिय सखी, ४–प्राण सखी, ५–परम प्रेष्ठा सखी। अब इन सबों के लक्षण सुनो।

१—जिसको श्री प्रियतम में अधिक स्नेह है, वह सखी कहाती है।

२—जिसका प्रेम श्रीप्रियाजी में अधिक है, वह नित्य सखी कहाती है।

३—श्री प्रिया प्रियतम दोनों में समान प्रेम रखने वाली प्रिय सखी कहाती है।

४—जो श्रीप्रिया जू को प्राण तुल्य प्यारी है, वह प्राण सखी कही जाती है।

५—इन सबों में मुख्य वह है, जो प्रेम तो दोनों में समान रखती है, पर क्रीड़ा में श्रीप्रिया जू का पक्षपात करती है। वही परम प्रेष्ठा सखी कहाती है।

❁ अथ दूती भेद ❁

अब दूतियों के भेद भी सुन लो, दूती कई प्रकार की होती है। १-स्वयं दूती और २-आप्त दूती, ३-अभितार्थी या इङ्गितज्ञा, ४-निसृष्टार्थी, ५ पत्र हारिणी, ६-शिल्पकारी, ७-दैवज्ञा, ८-लिंगिनी इत्यादि ।

अब इनके लक्षण सुनो—

स्वयं दूती वह है, जिसकी अत्यन्त उत्सुकतावश लज्जा टूट गई है और राग से अत्यन्त मोहित होकर नायक से स्वयं अभियोग करती है।

२—प्राणान्त उपस्थित होने पर भी जो विश्वास भंग न करे, अत्यन्त स्नेहवती और वाक्य प्रयोग में निपुण जो हो, वह आप्त दूती कहाती है।

३—नायक नायिका दोनों में से किसी का इङ्गित पाकर नाना उपाय से दोनों का मिलान कराने वाली अभितार्थी या इङ्गितज्ञा दूती कहाती है।

४—नायक नायिका दोनों में से एक के द्वारा कार्य भार पाकर, युक्ति के द्वारा दोनों का मिलान कराने वाली निसृष्टार्था दूती कही जाती है।

५—जो दोनों के केवल पत्र द्वारा संदेश वहन करे, वह पत्र हारिणी दूती है।

६—चित्र बनाकर संधान कार्य करने वाली शिल्पकारी दूती है।

७—ज्योतिष विद्या जानने वाली दैवज्ञा दूती होती है।

८—सामुद्रिक विद्या जानने वाली अथवा मंत्र तंत्र के द्वारा नायक नायिका का संधान कराने वाली लिंगिनी दूती कही जाती है।

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का सम्वाद—

हे प्यारी सखियो, सुनो। ये सभी सखियाँ और दूतियाँ श्रीप्रिया जू की अंगभूता आश्रयालंबन स्वरूपा हैं। इन सबों की सहायता से आप पूर्ण कौशल के साथ स्वच्छन्दता पूर्वक रसास्वादन करती हैं।

अब यहाँ आलम्बन विभाव की वार्त्ता समाप्त करती हूं। आगे उद्दीपन विभाव की बातें श्रीचन्द्रावतीजी कहेंगी।

हे श्रीचन्द्रावतीजी, तुम उद्दीपन विभाव वर्णन करो।

श्रीसीताराम रस चन्द्रोदय में १-छपेरिन, २-रंगरेजिन, ३-चूड़ी हारिन, ४-कहारिन, ५-चितेरिन और ६-मालिनी के द्वारा भी दौत्यकर्म माना गया है, परन्तु इनका उपयोग अधिकांश रूप में परकीया नायिकाओं के प्रति ही युक्तियुक्त है, क्योंकि ये सब घर घर में फेरी करने वाली हैं।

❀ अथ उद्दीपन विभाव ❀

श्रीचन्द्रावतीजी का सम्वाद—

अति उत्तम। हे प्यारी सखियो, अब मैं उद्दीपन विभाव कहती हूं। तुम सब सुनो।

जिसके द्वारा माधुर्य का विकाश होता है, वह आपके रूप, वय, गुण, लीला, क्रीड़ा स्थली, अंग सौरभ, निर्माल्य, श्याम मेघ आदि उद्दीपन विभाव हैं।

इनमें श्रीप्रिया जू के स्वरूपगत उद्दीपन का संक्षिप्त परिचय यह है। आप नित्य किशोरी नव वया, व्यक्त यौवना हैं; किन्तु श्रीप्राणप्रियतम जू को रस वैचित्री आस्वादन कराने के निमित्त, समयानुसार वयः सन्धि तथा पूर्ण यौवन माधुर्य का भी बिकाश करती हैं।

वाल युवा के मध्य वाली अवस्था वयः सन्धि कहाती है और सम्पूर्ण विकशित युवावस्था पूर्ण यौवन कहाता है।

अब श्रीप्रिया जू के श्रीअंगों में जो रूपादिक गुण हैं, उनके लक्षण सुनो।

बिना भूषण के भी आभूषण युक्त सी शोभा प्रतीत होना रूप है। अंगों के अभ्यन्तर प्रतिक्षण उत्थित वाह्य कान्ति का तरलता युक्त चाकचिक्य लावण्य है। अंगों का यथोचित सन्निवेश आप में सौन्दर्य है। निज समीपस्थ बस्तुओं को निज अंग प्रभाव से सारूप्य प्रदान करना, आप में अभिरूपता है। शरीर का अनिर्वचनीय रूपोत्कर्ष आपमें माधुर्य है।

पुष्पादि कोमल वस्तुओं का स्पर्श भी सहन न कर सकना जो आप में कोमलता है, उससे आदि करके अन्यान्य शारीरिक शोभा भेद हैं।

सुन्दर कान्त स्वरूपा, धृत षोडश श्रृङ्गार द्वादशाभरणा, श्रीनववया आदि पच्चीस गुण कहे गये हैं।

इनसे भिन्न लीला तथा क्रीड़ा सम्बन्धी भी कुछ गुण हैं। उन्हें सुनो।

यथा—भाव रूप, चिन्तामणिमयी श्रीप्रिया जू का श्रीविग्रह है। अस्मादि सखीगण इन महाभावमयी, चिन्तामणि स्वरूपा श्रीप्रिया जू की कायव्यूह स्वरूपा हैं।

इनका आध्यात्मिक स्वरूप इस प्रकार है। इनके प्रति श्रीप्राणप्रियतम जू का जो स्नेह है, वही इनका सुगन्धमय उबटन है। करुणा रूप अमृतधारा में इनका पूर्वाह्न स्नान हुआ है। तरुणावस्था अमृतधारा में मध्याह्न स्नान हुआ है। लावण्य रूपी अमृतधारा में अपराह्न स्नान कर लज्जा रूपी श्याम वर्ण की साड़ी धारण किये हुई हैं। श्रीप्रियतम के अनुराग रूपी लाल दुपट्टा ओढ़े हुई हैं। प्रणय और मान रूपी कंचुकी से वक्षस्थल ढका है। सौन्दर्य रूपी केशर, तथा मन्द हास्य रूपी कपूर, एवं प्रणय रूपी चन्दन से मिश्रित अंगराग आपके श्रीअंगों में चर्चित है। प्रियतम श्रृङ्गार रस रूपी पूर्ण मृगमद से अंग चित्रित हैं। श्रीप्राणप्रियतम जू के प्रति वक्रता एवं प्रच्छन्न मान ही आपका केश समूह है। धीरा अधीरादि भेद से श्रीप्रियतम प्रति रोष का प्रकाश ही रेशमी वस्त्र है। श्री—

प्रियतम जू के प्रति अनुराग रूपी पान से आपके अधर और ओठ अनुत्तण लाल हो रहे हैं। प्रेम पूर्ण कौटिल्य का नेत्राञ्जन लगा है। सात्विक प्रकाशमान हर्षादि संचारी भाव रूपी आभूषणों से प्रत्येक अंग विभूषित है।

उत्तम रूप एवं गुणगण रूपी पुष्प मालाओं से समस्त देह सुशोभित है। सौभाग्य रूपी तिलक ललाट में प्रकाशित है। प्रेम की अनुकूलता रूपी रत्न जटित धुकधुकी से हृदय सुशोभित है।

श्रीप्रियतम की लीला में संलग्न मनोवृत्ति रूपी मध्यम वय वाली सखियाँ आस पास में खड़ी हैं। आप उनके कंधे पर हाथ रखे हुई हैं। निज अङ्गों की शोभा रूपी भवन में, गर्व रूपी पलंग पर बैठी हुई, सर्वदा श्रीप्रियतम संग की कांत्ता करती रहती हैं।

श्रीप्रियतम के नाम, गुण तथा सुयश रूपी कर्णफूलों से आपके श्रवण शोभायमान हैं और श्रीमुख से भी यही वस्तुएँ निरन्तर प्रवाहित होतो रहती हैं। श्रीप्राणप्रियतम जू को मधुर रस पान कराकर, उनकी कामनाओं को निरन्तर पूर्ण करती रहती हैं। आपका श्रीविग्रह अनुपम गुण गणों से परिपूर्ण है। यही श्रीप्राणप्रिया जू का संक्षिप्त उद्दीपन विभावमयी गुणावली है।

हे श्रीसर्वेश्वरी जू ! मैंने आपके आज्ञानुकूल यहाँ तक सुनाया। आगे जैसी आपकी आज्ञा।

श्रीसर्वेश्वरी जू का सम्वाद—

हे प्यारियो ! उद्दीपन विभाव स्वरूप माधुरी प्रकरण का वर्णन हो चुका। अब स्थायिभाव माधुरी प्रकरण श्री-चंपकलताजी कहेंगी।

हे चंपकलते ! आप स्थायिभाव माधुरी प्रकरण को कह कर सुनाइये।

❀ अथ स्थायि भाव ❀

श्रीचंपकलताजी का सम्वाद—

आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। हे सखियो, सुनो ! मैं स्थायिभाव का वर्णन करती हूँ।

प्रेम स्वरूपा श्रीप्रिया जू की स्थायि रति श्रीप्राणप्रियतम जू के प्रति कांत रूपा है। रति प्रेम की अंकुरावस्था कही जाती है। इसका स्पष्ट लक्षण मनः संलग्नता है।

यह मधुरा रति तीन प्रकार की होती है। साधारणी, समञ्जसा और समर्था। इनके लक्षण सुनो।

सामान्य भाव से अपने सुख की चाह वाली साधारणी रति है। अपने सुख के साथ साथ प्रियतम के सुख की भी चाह वाली समञ्जसा रति कही जाती है।

स्वसुख वासना शून्य केवल प्रियतम सुख प्रयोजनवती समर्था रति कहाती है।

समर्था रति ही उत्तरोत्तर गाढ़ दशा को प्राप्त हो, महा-

भाव पर्यन्त पहुँच जाती है, जो अंकुरा रति की परमावधि (सीमा) है।

यथा—समर्था रति प्रथम दशा में ऊँख बीजवत है। वही प्रेमा होकर ऊँख समान, स्नेह होकर रस तद्वत, मान होकर गुड़ वत्, प्रणय होकर खाँड़ सदृश, राग होकर शक्कर तुल्य, अनुराग होकर चीनी इव और वही महाभाव होकर मिश्री समान हो जाती है।

अब इन सबों के पृथक पृथक लक्षण सुनो—

पूर्व जन्म के संस्कार जन्य स्वभाव से अथवा रूप दर्शन वा गुण श्रवण से श्रीप्रियतम में जो प्रथम प्रथम प्रेम का आविर्भाव होता है, उसे रति कहते हैं।

विघ्न के संभव में भी प्रेमशील मन का ह्रास न होना प्रेमा है। प्रेमातिरेक से चित्त का द्रवीभूत होना स्नेह है। स्नेहमें भी दो भेद हैं। किसी नायिका में यह घृतवत् और किसी में यही स्नेह मधुवत् होता है।

प्रियतम को अत्यन्त गौरवता एवं आदर देना घृत स्नेह है; क्योंकि इसमें शीतलता रहती है। इसी से इसमें तदीयत्व भाव की प्रधानता होती है।

मधुवत् स्नेह की उष्णता जन्य नशा से स्नेह की अत्यन्त वृद्धि होने के कारण, नायिका ऐसी मतवाली बनी रहती है कि प्रियतम को गौरवता एवं आदर देना भूली रहती है। अतः वह मधु स्नेह है। इसमें मदीयत्व भाव प्रबल रहता है।

तदीयत्व का अर्थ यह है कि मैं उनकी हूँ, उनके अधीन हूं और प्रियतम मेरे हैं, मेरे अधीन हैं यह भाव मदीयत्व सूचक है।

स्नेहाधिक्य में प्रियतम के बीच किंचित भी गौरवता न देना मान कहाता है।

प्रिया प्रियतम के तन मन का ऐक्य प्रणय है। यह प्रतीति पूर्ण प्रीति की दशा है।

प्रियतम के संयोग में कोटि कोटि दुःख को भी अति सुख मानना तथा उनके बियोग में महान सुखदायक बस्तु भी दुःख समान होना, राग कहाता है।

जिसमें क्षण क्षण में नव नव प्रेम जगे, वह अनुराग है वही अनुराग जब सीमा को अतिक्रमण कर जाता है, तथा अपने प्रेमास्पद में भी वैसी ही दशा प्रगट कर देता है तब वह महाभाव होता है।

वह महाभाव रूढ़ एवं अधिरूढ़ भेद से दो प्रकार का होता है। अपने प्रियतम के संयोग सुख काल में कल्प भी लव मात्र प्रतीत होना तथा वियोग में लव भी कल्प पर्यंत सा भासित होना, रूढ़ महाभाव कहाता है।

अपने प्रियतम के संयोग सुख सिन्धु के सामने, कोटि-कोटि ब्रह्मांडों की सुख समष्टि भी विन्दु मात्र लगे तथा प्रियतम वियोग जन्य दुःख के सामने कोटिन ब्रह्माण्डों की यावत् दुःख राशि है, वे लेश मात्र भी न तुले, वह अधिढ़रू महाभाव है।

अधिरूढ़ भी मोदन और मादन भेद से दो प्रकार का होता है। मोदन के उदय होने पर अपने प्रियतम एवं तत्प्रिय जनों में भी क्षोभ उत्पन्न हो जाता है, क्योंकि इस दशा में सात्विक का उद्दीप्त सौष्ठव विलसता रहता है। वही मोदन वियोगकाल में मादन हो जाता है, जिसमें उन्माद की अनेक दशाएँ हो जाती हैं। इनमें पूर्वोक्त सभी विलासों के समय समय पर प्रगट करते रहने पर भी श्रीप्रियाजी की स्वभावतः नित्य मादनाख्य महाभाव में ही स्थिति है।

इस प्रेम मय स्वरूप तथा तज्जन्य महामाधुरी के प्राप्त होने पर, जो वाह्य क्रियायें प्रगट होती हैं, उन्हें अनुभाव कहते हैं।

उस अनुभाव के लक्षण और स्वरूप को, जिसे श्रीसर्वेश्वरी जी आज्ञा देंगी, वह कहेगी।

❊ अनुभाव प्रकरण ❊

श्रीसर्वेश्वरी चन्द्रकला जू का सम्वाद—

हे श्रीरूपमालतीजी, तुम अनुभाव के स्वरूप और लक्षण कहो।

श्रीरूपमालतीजी का सम्वाद—

अति उत्तम। आपके आज्ञानुसार मैं कहती हूं। हे प्यारी सखियो, मैं अनुभाव के स्वरूप और लक्षण कहती हूँ। तुम सब श्रवण मन लगाकर सुनना।

अनुभाव के दो भेद हैं; एक यौवनालङ्कार, दूसरा

उद्भास्वर। कान्त के प्रति गाढ़ाभिनिवेश के कारण रमणियों के सत्त्वगुणसे उत्पन्न २० आङ्गिक वैशिष्ट्य हैं, जो उनके यौवन को सुशोभित करने वाले अलङ्कार वत् प्रतीत होते हैं। इनकी संख्या बीस हैं। यथा—भाव, हाव, हेला, शोभा, कान्ति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य, धैर्य, लीला, विलास, विच्छित्ति, किलिंकिचित, मोट्टाइत, कुट्टमित, बिब्वोक, विभ्रम, ललित और विहृत।

अब इनके लक्षण सुनो—

१—नेत्र के इशारे से अपने निर्विकार चित्त के प्राथमिक कदर्प क्षोभानुभव को प्रगट करना भाव कहाता है।

२—वही भाव जब ग्रीवा, बाहु, नेत्रादि को टेढ़ा करके स्पष्ट रूप से व्यक्त किया जाता है, तो उसे हाव कहते हैं।

३—यह हाव जब उरोज फड़ककर, रोमांच प्रगट होकर एवं कटि वंधन खुलकर और भी अधिक स्पष्ट अभिप्राय सूचक हो जाता है, तो उसे हेला कहते हैं।

४—रति विलास के पश्चात् अंगों के भूषण वसनों को आलस्य बश नहीं सम्हालना शोभा कहाती है।

५—वही शोभा यौवन के अधिक कामोद्गम में कान्ति कहाती है।

६—वही कान्ति अवस्था, देश, काल की उत्तमता से अति उद्दीप्त होकर दीप्ति कहाती है।

७—नृत्य गान आदि परिश्रम से शरीर की सुकामरता सूचक

शिथिलता में जो रमणीयता आ जाती है, उसे माधुर्य कहेंगे।

८—रोषकाल में भी बिनय करना औदार्य कहाता है।

९—दुःख के समय में भी अपने प्रिय जनों में प्रेम प्रगट करना धैर्य कहाता है।

१०-रमणीय वेश एवं बचन रचना द्वारा अपने प्रिय के व्यापार का अनुकरण करना लीला कहाती है।

११-प्रियतम के संग होने पर, उस समय के सुख से प्रफुल्लित होकर जो मनोरम आङ्गिक चेष्टाएँ होती हैं, उन्हें बिलास कहते हैं।

१२-स्वल्प शृङ्गार एवं थोड़े भूषणों में भी विशेष शोभा निखरना विच्छित्ति है।

१३-प्रियतम के मिलन काल में आतुरता वश भूषणों का विपर्य्यय (कहीं का भूषण कहीं पहन लेना) विभ्रम है।

१४-अपने प्रियतम के बलात् रोकने पर भी हर्ष के कारण गर्व, अभिलाष, रोदन, मुसकान, असूया, क्रोध, भय-सबको मिलाकर वार्त्ता करना किलिंकिचित है।

१५-अपने प्रियतम का स्मरण कर अथवा उनकी चर्चा सुनकर रोमांचादि से अभिलाष प्रगट करना मोट्टायित कहाता है।

१६-अधर ओष्ट में दंतत्तत एवं उरोज मर्दनादि में हृदय में आनन्द भी है, पर बाहरी क्रोध पूर्वक उलाहना की तरह बात करना कुटमित है।

१७-अपने कान्त का गर्व मानादि में भर कर अनादर करना बिब्बोक है।

१८-अपने भौंहादि अंगों को नखरे से फुफकार कर भ्रमरादि निवारण में जो मनोहरत्व प्रगट होता है, वह ललित कहाता है।

१९-अपनी मनोभिलषित बस्तु को उपयुक्त अवसर पर लज्जा बश न कहे, केवल चेष्टा से प्रगट करे, वह विहृत है।

२०-प्रियतम के संग बिहारादि में निःशंक धृष्टता करना प्रगल्भता कहाती है।

(यहाँ तक २० भेद वाले यौवनालङ्कार का प्रसंग हुआ। अब आगे उद्भास्वर नामक अनुभाव कहती हूँ।)

भाव युक्ता नायिका के शरीर में जो जो क्रियायें प्रकाशित होती हैं, उन्हें उद्भास्वर कहते हैं।

यथा नीवी सरकना, चोटी खुलना, जृम्भा, नाक फुलाना आदि कई भेदों से होती हैं।

भावावेश में विविध प्रकार के कथनों को वाचिक अनुभाव कहते हैं। वह आलाप, विलाप, संलाप, प्रलाप, अनुलाप, अपलाप, सन्देश, अतिदेश, अपदेश, उपदेश, निर्देश, तथा व्यपदेश नामक बारह भेद वाले हैं। अब इस प्रसंग को यहीं छोड़कर, आगे सात्विक भाव कहती हूँ।

* अथ सात्विक भाव प्रकरण *

प्रियतम के साक्षात्कार होने पर अथवा प्रियतम संबन्धी

किञ्चित व्यवधान हेतु में भाव समूह द्वारा चित्त का आक्रान्त होना सत्त्व है और उससे उत्पन्न भाव समूह को सात्विक भाव कहते हैं।

यह स्वेद, स्तंभ, रोमांच, स्वरभंग, कंप, वैवर्ण्य, अश्रुपात तथा प्रलय नामक भेदों से आठ प्रकार के होते हैं।

वही धूमायित, ज्वलित, दीप्त, उद्दीप्त और सुदीप्त नाम से इनकी उत्तरोत्तर विकाशशील अवस्थाएँ हैं। श्रीप्रिया जू में समय समय पर पूर्व चार अवस्था वाली सात्विक दशाएँ भी विकशित होती हैं; परन्तु आप में विशेष रूप से सुदीप्त सात्विक भाव का ही विकाश रहता है।

❀ अथ सञ्चारी भाव प्रकरण ❀

अब सञ्चारी भाव भी सुन लो—

स्थायिभाव रूपी सुधा सिन्धु में लहरों के समान उत्पन्न होकर उसी में संचरण करे, उसके स्वारस्य को बढ़ा देवे, पुनः उसी में लीन हो जाय, वह संचारी भाव कहाता है।

निर्वेद, ग्लानि, श्रम, स्वेदादि इनकी ३३ संख्यायें हैं।

हे श्रीसर्वेश्वरीजी, इस प्रकार अनुभाव, सात्विक भाव और संचारी भावों को मैंने संक्षेप में सुनाया। अब आगे जैसी आपकी आज्ञा।

अथ नायक भेद तथा उनमें विविध रसाङ्गों की स्थिति

श्रीसर्वेश्वरीजी का सम्वाद—

हे प्यारियो ! ये सब क्रीड़ा भेद समय समय पर श्रीप्रियाजी में विकाशित होकर श्रीप्रियतम जू के रसास्वादन में विलक्षणता लाया करते हैं । इस प्रकार नायिका भेद एवं तत्सम्बन्धी रसाङ्गों को जानो ।

इसी प्रकार नायक भेद एवं तत्सम्बन्धी रसभेद श्रीहेमाजी सुनावेंगी ।

हेमाजी, आप नायक भेद और रस भेद कहकर सखियों को सुनायें ।

श्रीहेमाजी का सम्वाद—

बहुत अच्छा ! आपकी प्रेरणा से मैं नायक भेद तथा रस भेद सुनाती हूँ । हे प्यारी सखियो, सुनो ।

हमारे श्रीप्राणवल्लभ पति धीर ललित, अनुकूल, नित्य उत्तम नायक हैं ।

किन्तु समयानुसार रसास्वाद में विलक्षणता के लिये पति, उपपति और वैशिक भेदों से तीनों प्रकार के नायक बन जाते हैं । इन तीनों में से प्रत्येक के भी चार चार उपभेद हैं । धीरोदात्त, धीर प्रशान्त, धीरोद्धत और धीर ललित । इन भेदों से १२ प्रकार के नायक हुये । पुनः इनमें से प्रत्येक के उत्तम, मध्यम और कनिष्ट भेदों से छत्तीस प्रकार हुये । इनमें से प्रत्येक के शठ, धृष्ट, दक्षिण और अनुकूल भेद मिलकर कुल १४४ नायक भेद हुये । आप निज गान्धर्व विद्या बल से समय–

समय पर, इन नायकों में प्रत्येक का स्वरूप प्रगटाकर बिबिध भांति के रसास्वादन किया करते हैं। यही आपका विषया-लम्बन स्वरूप है। अब श्रीप्रियतम जू के अंगगत उद्दीपन विभाव सुनो।

यद्यपि नित्य मध्य किशोरावस्था में आपकी स्थिति रहती है, किन्तु लीलानुसार कभी कभी आदि और अन्त किशोरावस्था भी प्रगट किया करते हैं। आपके रूप, लावण्य, माधुर्य, अभिरूपता आदि कायिक गुणों को भी श्रीप्रियाजी के सदृश ही जानो। ऐसे भावोचित गुण तो आप में असंख्य हैं। उनमें से भी कुछेक के नाम सुन लो।

यथा—सुरम्य, मधुर, बलिष्ठ, नव यौवन, वक्र रूप, पंडित, प्रतिभान्वित, धीर, विदग्ध, दक्षिण नारिजन मनोहारी, पुरुष पर्यन्त मनोहारी, नित्य नूतन आदि असंख्येय गुणगण आपमें हैं। इन सब गुणों के प्रभाव से आपने लोकत्रय के रमणी वृन्द ही को नहीं, प्रत्युत दंडकारण्य बासी दिव्य ज्ञान शाली महर्षि वृन्द को भी मोहित कर लिया। शुकादिक योगी पुरुषों को कौन कहे, सावित्री सहित ब्रह्मा, पार्वती सहित शंकर और लक्ष्मी सहित नारायण भी आपके रमणीय सौन्दर्याधिक्य प्रभाव से बिह्वल हो पुरुषत्व को त्याग कर रमणी रूप से आपका सेवन करते हैं।

तुर्रा तो यह है कि आप स्वयं भी मणि माणिक्य विर-चित दीवालों में निज प्रतिबिम्ब देखकर निज रूप माधुरी से विमुग्ध हो, श्रीप्रियाजी के भाव से आक्रान्त हो जाते तथा

अपने ही स्वरूप के साथ आलिंगन स्वाद लेने के लिये अात व्यग्र हो जाते हैं। यह संक्षेपतः आपके कायिक उद्दीपन की महिमा है।

इसी प्रकार आपमें अनुभाव एवं सात्विक भाव भी जानना। नायिका भेद में अनुभाव के उद्‌भास्वर तथा यौवनालङ्कार भेद जो कहे गये हैं, वही आपमें भी बिपरीत रूप से प्रकाशित होते हैं।

इस प्रकार श्रीप्रिया प्रियतम जू के पारस्परिक स्थायिभाव, विभाव, अनुभावादि के संयोग से जो अद्‌भुत चमत्कारात्मक आनन्द प्रकट होता है, उसे रस कहते हैं।

शृङ्गार रस के मुख्य दो भेद हैं। विप्रलम्भ और दूसरा सम्भोग। पुनः विप्रलम्भ के चार उपभेद हैं। १-पूर्वराग, २-मान, ३-प्रेम वैचित्र्य और ४-प्रवास।

अब इनके लक्षण सुनो—

❁ चारो विप्रलम्भ शृङ्गार के लक्षण ❁

१-श्रीप्रियाप्रियतम जू के पारस्परिक सङ्गम के पूर्व श्रवण दर्शनादि जात जो प्राथमिक रति दोनों में उन्मीलित होती है, उसे पूर्वराग कहते हैं।

२—सम्मिलनोत्तर प्रेम जन्य जो कौटिल्य प्रकाश है, उसे मान कहते हैं।

३—संयोगकाल में वियोगाभास को प्रेमवैचित्र्य कहते हैं।

४—पूर्व संयोग के उपरान्त प्रेमास्पद के देशान्तर गमन जन्य वियोग को प्रवास कहते हैं।

* चार प्रकार के सम्भोग *

सम्भोग के भी चार भेद हैं। १-संक्षिप्त, २-संकीर्ण, ३-सम्पन्न और ४-समृद्धिमान्। इनके स्वरूप यों हैं—

१—प्रथम मिलनोत्तर संभोग को संक्षिप्त कहते हैं। २-मानोत्तर सम्भोग को संकीर्ण; ३-प्रेमवैचित्र्य के बाद सम्पन्न एवं ४-प्रवासोत्तर सम्भोग को समृद्धिमान् कहते हैं।

श्रीप्रियाप्रियतम के सम्भोग रस की ये सब विलासावस्थायें हैं, जो समय समय पर प्रगट होकर स्वाद में वैचित्री लाती रहती हैं। किन्तु आपकी स्वाभाविक स्थिति नित्य सम्भोग में रहती है। इसमें दर्शन, स्पर्श, गीत, वाद्य, नृत्य, फाग, हिंडोल, जलक्रीड़ा, नौका बिहार, कन्दुक क्रीड़ा, रास, तांडव, द्यु त क्रीड़ा, मधुपान, परिरम्भन, गलबाँही, गोद में बैठाना, पान पवाना, इत्र सुँघाना, गुलाब जल छिड़कना, आश्लेष, मुख चुम्बन, नखक्षत, बिम्बाधर सुधा पान, कुचमर्दन, रतियाँचना, और सम्प्रयोग की अनेक रसमयी क्रियायें सर्वदा होती रहती हैं।

इन रसभेदों को श्रीप्रियाप्रियतम जू नित्य आस्वादन करते रहते हैं। इस अवस्था विशिष्ट श्रीप्रियाप्रियतम के दर्शन एवं सेवनमय रस को इन्हीं के अनुग्रह से प्राप्त कर, हम सब सखियाँ भी नित्य उन्मादित तथा आह्लादित होती रहती हैं।

हे सखियो, नायक के रस भेद इस प्रकार जानना। हे श्री-सर्वेश्वरी जू, मैंने आपकी प्रेरणा से नायक भेद कह सुनाये। अब जैसी आपकी इच्छा।

(इति श्रीप्रियाप्रियतम रस माधुरी)

❀ महारास प्रकरण ❀

* प्रस्तावना *

श्रीसर्वेश्वरी जू का सम्वाद—

हे प्यारियो, यही श्रीप्रियाप्रियतम जू की रस माधुरी का संक्षिप्त परिचय है, जो कि तुम्हारी प्रार्थना से हमने वर्णन किया और कराया है। अब इसके अतिरिक्त तुम्हारी क्या इच्छा है, सो कहो।

* व्यास गान दोहा *

कोइ बोली सर्वेश्वरी, चन्द्रकला सिरमौर।
जुगल मधुर रस प्याइ कै, श्रवन सिराई मोर॥
वह प्रत्यच्छ देखन लिये, नयन अधिक अकुलाय।
सो प्रत्यच्छ दिखलाइ कै, सुख दीजै हुलसाय॥

सखी सम्वाद—

हे श्रीसर्वेश्वरी जू! आपने युगल रस माधुरी को श्रवण कराकर, हम सबों के कर्ण और मन को तो तृप्त किया, अब उसे साक्षात् दृष्टिगोचर कराकर, हम सबों के नेत्र और हृदय को भी प्रफुल्लित करने की कृपा कीजिये; क्योंकि वह सुख पान करने के लिये हमारे नयन अधिक अकुला रहे हैं।

* व्यास गान *

बोली तब सर्वेश्वरी, प्यारी धीरज धार।
देखब अब अति सीघ्र ही, जो अभिलाष तुम्हार॥

श्रीसर्वेश्वरी सम्वाद—

हे प्यारियो ! तुम सबों ने बहुत अच्छा कहा । मनमें धैर्य धारण करो । देखो, अब अति शीघ्र ही तुम सबों का अभीष्ट पूरती हूँ ।

※ व्यास गान दोहा ※

असं कहि सखियन से वचन, पुनि स्वामिनि सिर नाय ।
बोली हे श्री मैथिली, सुनहु विनय मन लाय ॥
नित्य रास के अब समय, ह्वै गै सुखद उदार ।
रास चौक पगु धारि कै, करु अनन्द बिस्तार ॥
सखियन मन पूरन करो, प्रीतम सँग करि रास ।
सखियन नयन चकोर हैं, चाहत चन्द प्रकास ॥

श्रीसर्वेश्वरीजी की बिनय श्रीप्रियाजी के प्रति—

हे श्रीप्रिया जू ! हमारी रसमयी वाणी चित्त लगाकर सुनिये । देखिये, अब नित्य रास का समय हो गया है । आप दोनों प्रिया प्रियतम रास मंडल में पधार कर, रास जन्य आनन्द का विस्तार कीजिये और सभी सखियों के मनोरथ पूर्ण कीजिये । देखिये, सबके नयन चकोर समान होकर, आप दोनों के रस आनन्द चन्द्र का विकाश चाह रहे हैं ।

※ व्यास गान दोहा ※

सखी बिनय सुनि कै सिया, बोली तब मुसकाइ ।
तुम सब के पूरन करव, मनोराज मन भाइ ॥

श्रीप्रिया जू का सम्वाद—

हे श्रीचन्द्रकले, अब आप सबों के मनोरथ को पूर्ण करूँगी।

※ व्यास गान दोहा ※

असकहि बोली पीय सो, सुनिये नवलकिसोर।
रास स्वाद सुख लेन को, चाह सखिन घनघोर॥
सखियन कहँ सुख देन को, चलिये मंडल बीच।
सब हीतल सीतल करो, रास अमिय रस सींच॥

श्रीप्राणप्रियाजी का सम्वाद—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू! सुनिये। रास स्वाद सुख लेने के लिये, सब सखियों का मनोरथ हो रहा है। अतः इन सबों को सुख देने के लिये रास मंडल में चल कर, रासामृत की घनघोर वर्षा कीजिये और सब सखियों के हृदय को शीतल कीजिये।

※ व्यास गान दोहा ※

सिया वचन सुन के पिया, बोले राजकिसोर।
मोहि तोहि ते अधिक तर, उमड़त हिये हलोर॥
ताते करिये सीघ्र ही, प्यारी विलम न लाव।
पंचवान सन्धान कै, किय अंगन में घाव॥

श्रीप्राण प्यारे जू का सम्वाद श्रीप्रिया जू के प्रति—

हे श्रीप्राणप्रिया जू! आप से अधिक तो मेरे हृदय में

रास सुख लेने के लिये आनन्द की हिलोरें उठ रही हैं। इससे आप शीघ्र कीजिये। देर न लगाइये, क्योंकि आपका बचन सुनकर मदन मेरे अंग अंग में रंग का बिस्तार कर रहा है।

*** व्यास गान दोहा ***

तब प्यारी रुख पाइ के, चन्द्रकला सरदार।
सखियन अनुसासन दये, करो नृत्य सुखकार॥

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू का वचन सखियों के प्रति—

हे प्यारियो! अब तुम सब उठकर नृत्य करो और श्रीप्राण सञ्जीवन जू को रास मंडल में पधारने की प्रार्थना करो।

* रासारम्भ *

*** व्यास गान दोहा ***

चन्द्रकला रुख पाइके, निज निज साज सम्हारि।
जुगल चरन सिर नाइ के, नटन लगीं सब नारि॥

*** एक सखी का नृत्य पूर्वक पद गान ***

(राग बरवा)

नटो पिया लाल हौं बलिहारी॥
पइयाँ परौं रौरे अरजि करति हौं, चूमो गाल पुआरी।
थेइ थेइ करि मोहि नाचि रिझावो, तब बनिहैं कछु यारी॥
तुम नाचो पिय प्यारी गावैं, हम सब देहैं तारी।
हँसि हँसि घूमनि ग्रीव मुरनि पर, तन मन देहौं वारी॥

'नवलबिहारी' मधुर वचन सुनि, छमकि छैल छवि भारी।
कुंडल अलक हलन बुलाक की, व्याज खोजि हिय हारी॥

* दूसरी सखी का पद गान नृत्य पूर्वक *

(रागिनी बहुली)

साँवलिया प्यारे सिय संग रास मचाओ।
आवो जी आवो रास मंडल में, रस वर्षा बरसाओ॥
रास विलास रमो मन भाये, बहु रति काम लजाओ।
'प्रेम' भरी आतुर सब सखियाँ, अब जनि बेर लगाओ॥

* श्याम गान सोरठा *

श्रवनि सखिन वर बैन, हिय आनन्द बढ़ावने।
मगन भये रसऐन, प्यारी छवि रस में पगे॥

* श्याम गान दोहा *

सिंहासन से उतरि दोउ, गलबाँही इक साथ।
नटन वेष अवलोकि कै, मूर्छित भे रतिनाथ॥
नृत्यत प्यारी पीय मिलि, अर्ध ऊर्ध गति धार।
ताथेइ थेइ थेइ वदत पुनि, बहु विधि भाव प्रचार॥
पंचम राग अलाप कै, गावत सिय पिय साथ।
बाजत जंत्र अनंत धुनि, सुनि जागत रतिनाथ॥

* श्रीप्राण प्यारे का गान *

(रागिनी वागेश्वरी)

प्यारी तेरे अलकैं डासि गये।

मानत नाहिन गरुड़ मंत्र को, लहर लहर पर लहर दये।
गोरी माय पिता मोरे गोरे, याहि ते मैं कारि कारी छये॥
पैयाँ परत रौरे अरजि करत मैं, अधर सुधारस प्याइ जये॥

* श्रीप्राणप्यारी जू का गान *

(रागिनी रागेश्वरी)

साँवलिया तेरे जुलफैं जुलुम करे॥
निरखत मदन चढ़त नख सिख लों,
कहकत अहकत भूमि परे।
उरज प्रवल मानत नहिं विनती,
कहर लहर तन पीर भरे॥
कंपत अंग पसेवनि टपकत,
लरखर कंठ नैन अँसुवा झरे।
'नवलविहारी प्रिया' पिय मेरे हिय बिच,
नवल छयल छवि रहत अरे॥

* श्रीप्राणप्रियतम जू गान *

(राग अड़ाना)

प्यारी तेरे नैना में अजब टोना॥
अंजन न है प्यारी फाँसी मेरे गरे डारी,
द्दगन के कोर में गजब होना।
उठी तन पीर भारी पीरी अंग अंग छाये,
मदन के लहर जुलुम ढोना॥

अंग सब कंप गये लरखर कंठ भये,
प्रान के पयान मे चहत होना।

* श्रीप्राणप्रिया जू का गान *

(राग छायानट)

तेरी चितवनि मोही राजकुमार।
अनियारे कजरारे नयनन, चलत समर सर मार॥
खंजन मीन कमल मद मोचन, लोचन लोल निहार।
जुवतिन गन तन लता बिपिनि बिच, खेलत रूप सिकार॥
रसिक सिरोमनि राज कुँअर तुम, मन की जाननहार।
'रसमाला' चितवनि उर साली, लीजे वेग उवार॥

* व्यास गान दोहा *

यावत् जग के जीव हैं, जड़ अथवा चैतन्य।
रास जन्य सुख पाइ के, सुधि नहिं अपनी अन्य॥
महारास सुख के लिये, सब हिय बढ़्यो उमंग।
इक इक के मन में रह्यो, नटैं लाल मम संग॥
हाव भाव दरसाइ के, सरसावैं बहु रंग।
हिय कामागि बुझावहीं, सब बिधि दै अँग संग॥
सब सखियन मन जान के, भये लाल बहु रूप।
सब को सुख सरसावहीं, धरि बहु कला अनूप॥
इक इक के कर ग्रहन कर, भये चक्र आकार।
नाचत नाना भेद से, बहु विधि की गति धार॥

कोक कला में अति कुसल, सब विधि राजकुमार ।
दरसावत रस रास में, बहु विधि कला प्रचार ।।
जस जस जाकी भावना, तस तस केलि पसार ।
सरसावत सुख तियन को, दच्छिन लच्छन धार ।।
सखी कोइ पिय सों कही, सुनिये राजिवनैन ।
जो कछु मैं वरनन करौं, सुरस दैन सुख ऐन ।।

सखी वचन श्रीप्राणप्रियतम जू के प्रति—

हे श्रीप्राणनाथ जू ! मैं जो कहती हूं, उसे सुनिये । आपके रसीले नयन रमणियों के चित्त को बरवश आकृष्ट करने वाले हैं। आपका उदार वक्षस्थल स्पर्शमणि की भांति नायिकाओं को अनायास आकर्षण करने में निपुण है। मेरी मुग्धा अवस्था का बिचार कर, मेरी हितैषिणी सखियों ने सम्प्रति आपके सुमधुर नाम श्रवण पर्यन्त से मुझे बचाने की भरपूर चेष्टा की। तौभी दूर से अकस्मात् आपकी मधुर नूपुर ध्वनि श्रवण गोचर होने से मेरा नीवी-बन्धन शिथिल हो गया। वक्षोज चंचल हो गये। अतः मैं भागी हुई आपकी सेवा में उपस्थित हुई हूँ।

※ व्यास गान दोहा ※

परिरंभन करि तेहि तिया, कहे पिया मधु वैन ।
मम हिय मन्दिर में बसो, सदा प्रिया सुखदैन ।।

श्रीप्राणप्रियतम जू का बचन उस सखी के प्रति—

हे प्राणप्यारी ! तुम मेरे हृदय मन्दिर में सतत सप्रेम

निवास करती हो। दृष्ट अदृष्ट, ज्ञात अज्ञात, किसी भी अवस्था में अनेक विधि चातुरी करने पर भी, तुम्हारी सखी की क्या क्षमता है कि तुम्हें मुझसे बचा रखे ? भला, लाख छिपने पर भी मैं तुम्हें कब छोड़ने वाला हूँ ?

(इतना कहकर परिरम्भण करना)

❊ व्यास गान ❊

हे पिय प्यारी संग में, अंत रंग रति केलि ।
चाहत देखन नैन मम, बोली कोउ अलबेलि ॥

श्रीरूपलतिकाजी का वचन श्रीप्राणप्रियतम जू से—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू ! श्रीप्रिया जू के संग आपकी अन्तरंग क्रीड़ा दर्शन करने के लिये, मेरे नयन और मन लालायित हो रहे हैं। मुझे इसी में अति आनन्द है।

❊ व्यास गान दोहा ❊

प्यारी तुम जनि भय करो, प्रानप्रिया से नेक।
जौं वह क्रोधित होयँगी, तौ मनाउँ सिर टेक ॥

श्रीप्राणप्रियतम जू का वचन श्रीरूपलतिका प्रति—

हे प्यारी ! यदि तुम श्रीप्रिया जू के भय से अपना अंग स्पर्श नहीं करने देती हो, तो श्रीप्रिया जू से तुम्हें भय करने की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि तेरे सम्पर्क से वे मेरे ऊपर क्रुद्ध होंगी, तो मैं उन्हें कर जोड़ कर मना लूंगा।

(इतना कहकर उसका अलक सँवारना)

❋ व्यास गान दोहा ❋

(स्नेह का उदाहरण)

नेह लच्छना चतुरि कोउ, बोली पिय गहि हाथ।
हे पिय प्रान सुजान जू, वचन सुनहु मम नाथ॥

श्रीरसमालिकाजी का वचन, श्रीप्राणप्रियतम के प्रति—

हे प्राणेश्वर ! आपके नाम श्रवण, रूप अवलोकन तथा अंग संग जन्य आनन्द को स्मरण कर, माधुर्य सार द्वारा रचित सुधामयी प्रतिमा की तरह घन होने पर भी श्रीस्वामिनी जू भाव रूपी उष्मा के द्वारा द्रवित हो जाती हैं। इन सब क्रियाओं को स्मरण कर तथा आप के परम सुखद आदरमय स्पर्श के कारण मेरा मन तो इस समय शीतोपला की भांति आपकी माधुरी में विलीन हो रहा है।

❋ व्यास गान दोहा ❋

सुनि बोले तब प्रान प्रिय, हे प्यारी सुख दानि।
तेरे अंग सुपरस कर, मम हिय द्रवत सुजानि॥

श्रीप्राणप्रियतम वचन स्नेहवती सखी प्रति—

हे प्राणेश्वरी ! परम आदर और स्नेह से अर्पित तुम्हारे वक्षस्थलादि अंगों के मधुर स्पर्श से मेरा हृदय चन्द्रकान्त-मणि की भांति द्रवित हो रहा है।

(इतना कहकर मुख चूमना)

❋ व्यास गान दोहा ❋

(धीरा मध्या नायिका का उदाहरण)

रूप गर्विता नायिका, बैठी मान सुधारि ।
पिय कर परसत अंग तेहि, बोली सो सुकुमारि ॥
अंगराग चित्राम जुत, जनि परसो मम गात ।
छिन्नभिन्न करि देत तुम, हौ उद्धत मद मात ॥

मानिनी रूप गर्विता नायिका का वदन स्पर्श करने पर, वह श्रीप्राणप्यारे को उलाहना देती हुई कहती है—

हे प्रियवर ! मेरे अंगों का स्पर्श न कीजिये; क्योंकि उन पर निर्मित चित्र विचित्र परमाद्भुत पत्रावली को आप निज औद्धत्य के आवेश में छिन्नभिन्न कर देते हैं। केवल बार बार प्रलोभन पूर्ण वचन ही कहते रहते है, मेरे विदलित रसाङ्ग पुष्पों को उत्फुल्ल नहीं किया करते।

❋ उसी मानिनी नायिका द्वारा पद गान ❋

(*रागिनी छायानट*)

छुओ जनि स्याम बाँह हमारी ।
अलग रहो रम औरन से पिय, हो तुम चतुर बिहारी ॥
पलकन पीक अधर अञ्जन जुत, भाल महावर धारी ।
रस बस फिरत मत्त सबहिन सँग, तिय गन रूप निहारी ॥
चंचल नयन मयन मद माते, पीठ चुरी कहँ धारी ।
'रसमाला' न करो बरजोरी, न तो देहौं रस गारी ॥

* व्यास गान दोहा *

दया सत्य भाषन यहै, दुर्गुन हैं मम दोय ।
जिन के कारन मोहि पर, दोषारोपन होय ॥

श्रीप्राणप्यारे जू का वचन उपर्युक्त मानवती नायिका प्रति—

हे प्रिये ! दया और सत्य भाषण—मुझमें यही दो प्रबल दुर्गुण हैं; जिनके कारण तुम नाहक मुझपर दोषारोपण किया करती हो। भला कहो तो सही ! तेरे ही कंचुकी बन्ध खोलने एवं रसमय अंगों पर नित्य विविध प्रकार की सुन्दर सुन्दर पत्रावली रचते रहने के कारण मेरे हस्त अनुरंजित हो गये हैं न। इसी प्रकार तुम से सदा निष्कपट और सत्य भाषण करते रहने के कारण मेरे अधर पल्लव रक्त रंजित हो रहे हैं।

उसी अभियुक्ता नायिका की उक्ति—

भला ! आपकी रसना कभी मिथ्या भाषण कर सकती है ? क्योंकि वह तो सहस्र सहस्र पतिव्रता रमणियों के अधरा-मृत पान कर पवित्र हो चुकी है। और आपके हस्त भी भला, कैसे बल प्रकाश कर सकते हैं ? क्योंकि ये हस्त भी ऐसे दया-वान हैं कि अनेकों सुन्दरी वृन्द के नीबी-बन्धन देखते मात्र कोमलता पूर्वक इस कौशल से मोचन कर देते हैं, जिसको आकाश चारिणी देवाङ्गणा तक देख कर दंग रह जाती है। तब मेरे इस कंचुकी बन्द को शिथिल करना आप सदृश शिल्पी के लिये कौन सी बड़ी बात है !

श्रीप्राणप्रियतम जू का वचन उसी नायिका प्रति—

हे प्रिये अब मेरे ऊपर दया करके निज कोप को शान्त करो। देखो, इस समय मैं तेरे ओष्ट को भी रक्तरञ्जित किये देता हूं।

(इतना कहकर पान पवाना)

(इति धीरा मध्या नायिका उदाहरण)

* व्यास गान दोहा *

(अथ अधीरा प्रगल्भा उदाहरण)

पीतम के कर कमल से, परस किये पर बाल।
निज भूषन से ताड़ि पिय, बोली सो सुनु लाल॥

श्रीचन्द्रावती नाम्नी सखी श्रीप्रियतम के वदन स्पर्श करने पर, क्रुद्ध हो उन्हें अपने भूषणों से ताड़न कर बोली—

हे प्यारे! मुझे स्पर्श मत करो। मुझसे अलग रहो।

* मानवती चन्द्रावती का पद गान *

(रागिनी कौशिक कान्हाड़ा)

अलग रहो पिया अलग रहो।
औरन से रम के तुम आये, जाने भले नहिं बाँह गहो॥
पलकन पीक अधर कजरारे, अरुन नयन चित चंचल हो।
भाल महावर लाल तुम्हारे, देखहु दरपन हाथ गहो॥
दूर रहो छूवो जनि प्रीतम, धीरज होय कछु बात कहो।
'रसमाला' पिय भँवर भये तुम, जाव जहाँ रस बहुत लहो॥

* श्याम गान दोहा *

पीतम परम सुजान वर, रघुनन्दन मुसुकाइ ।
प्यारी प्रति बोलत भये, रसमय वचन सुहाइ ॥

श्रीप्राणप्रियतम चम्पकलता से कहते हैं—

हे प्यारी! ऐसा क्यों?

चम्पकलता—

आप समय बिताकर क्यों आये?

श्रीप्रियतम जू—

हे प्यारी! इस अपराध के लिये आप मुझे कुछ दंड देकर क्षमा करें।

चम्पकलता—

दंड यही है कि मेरे चरण में महावर रचना कर, अपना चित्राम कौशल दिखाइये।

श्रीप्रियतम जू—

हे प्यारी! मैं तो यह चाहता ही था। बहुत अच्छा।

(ऐसा कहकर महावर लगाना)

* व्यास गान दोहा *

(राग नामक प्रेमदशा का उदाहरण)

राग भरी प्यारी कोऊ, बोली यों रस रात ।
सुनिये प्रान सुजान जू, कहौं हृदय की बात ॥

रागवती श्रीरूपमालतीजी श्रीप्रियतम से कहती हैं—

हे प्राणनाथ! आप निकुञ्ज से एक क्षण के लिये भी

बाहर निकलते हैं, तो मेरा चित्त जल से बिछुड़ी हुई मछली की भांति चेतना हीन हो जाता है। अतः आप से बार बार प्रार्थना है कि कृपया निज कंठ स्थित बनमाला की मुझे भ्रमरी बना लें, जिससे आपकी हृदय स्थित माधुरी का मैं सतत आस्वादन करती रहूँ।

*** व्यास गान सोरठा ***

पीतम राजिव नैन, प्यारी प्रति बोलत भये।
भ्रमरी क्यों वद वैन, हौ मेरी हृदयेश्वरी॥

श्रीप्रियतम जू—

हे प्रियतमे! भ्रमरी क्यों? तुम तो मेरी हृदयेश्वरी हो। देखो, मैं ही तेरे यौवन पुष्पस्तवक का भ्रमर बनता हूँ।

(ऐसा कहकर वेणी ग्रन्थन करना)

*** व्यास गान दोहा ***

[अनुराग का उदाहरण]

इक लच्छन अनुराग जुत, सुकुमारी मृदु बात।
बोली पीतम से चकित, रागावेसित गात॥

श्रीहेमाजी—हे प्राणेश्वर! आप आज कल कहाँ रहते हैं?*

'सदानुभूतमपि यः कुर्य्यान्नवनवं प्रियम्।
रागो भवन्नवनवः सोऽनुराग इतीर्यते॥'

अर्थात् अनुराग प्रेमास्पद का निरन्तर अनुभव करते हुये भी उन्हें अननुभूत वत् प्राप्त कराता है। यहाँ प्रियतम के सदैव दर्शन करते रहने पर भी, उन्हें अनजान सा समझना अनुराग अतिशय्य सूचित करता है।

*** ब्यास गान दोहा ***

नायक सुठि लच्छन भरे, श्री अवधेस कुमार।
मंद विहँसि बोलत भये, रसिक राज सरदार॥

श्रीप्राणप्यारे जू—

सतत तेरे संग क्रीड़ा में।

श्रीहेमाजी—

आपका नाम क्या है?

प्यारे—

क्या तू मुझे पहचानती नहीं?

श्रीहेमाजी—

नहीं। यदि पहचानूं भी तो कैसे? आपसे अभी अभी तो सर्व प्रथम मिलन हो रहा है।

प्यारे—

नहीं, नहीं! इस मुग्धत्व को छोड़ो और हृदय में बिचार करो। मैं तो वही नित्य तुम्हारे वक्षस्थल पर रमण करने वाला हूँ, जिसे तुम प्राणेश्वर कह कर पुकारती रहती हो।

श्रीहेमाजी—

बात तो सत्य है, किन्तु मुझे तो इस समय ऐसा ही प्रतीत होता है, मानो जीवन भर में आज ही आप विद्युतवत् मेरे नयन घन में व्यक्त हुये हैं।

श्रीप्रियतमजी—

हे प्राणप्यारी! ऐसा न कहो, तुम तो अनुराग में भूल जाती हो।

(सखी सम्वाद के पश्चात् श्रीप्राणप्यारे का उसे पान पवाना एवं दर्पण दिखाना)

✻ व्यास गान दोहा ✻

(रूढ़ महाभाव का उदाहरण)

महारास रस नेत्रिका, सर्वेश्वरि सरदार ।
चन्द्रकला बोलत भई, सुनिये रसिक उदार ॥

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का सम्वाद—

हे प्राणनाथ ! सुनिये । आपके सौन्दर्य, माधुर्य्य, लावण्य, सौगन्ध्य मंडित मंगलमय विग्रह के दर्शन स्पर्श, स्मरणादि हमारे लिये क्षण क्षण के लिये अनिवार्य्य है। पलक गिरने पर जो आपका क्षणार्द्ध वियोग, वह भी हमारे लिये कोटि कल्प से भी अधिक दुस्तर हो जाता है। और आपके द्विपरार्द्ध कालिक (ब्रह्मा की आयु पर्यंत अविच्छिन्न सतत

✻ रूढ़ महाभाव का लक्षण ✻

निमेषासहतासन्न जनता हृद्विलोडनम् ।
कल्पक्षणत्वं खिन्नत्वं तत्सौख्येऽप्यार्ति शङ्कया ॥'
मोहाद्य भावेऽप्यात्मादि सर्व विस्मरणं सदा ।
क्षणस्य कल्पतेत्याद्या यत्र योग वियोगयोः ॥'

अर्थात्— रूढ़ नामक महाभाव दशा में असहिष्णुता, निकट स्थित जन समूह के हृदय का आलोड़न, कल्प क्षणत्व, प्रिय सुख में आर्ति-शङ्का से क्षीणत्व, आत्मादि सर्व विस्मरण, क्षण कल्पता, आदि अनुभाव प्रगट होते हैं ।

दर्शन भी लव मात्र से लघुतर हो जाते हैं। इस अजेय व्यथा की शान्ति के लिये आपके मृदुल अरुण चरणों को निज वक्षोज पर रखना चाहती हूँ। परन्तु इस अंग को कठिन कठोर समझ कर, आपके सुकुमार पादारविन्द में आघात लगने का भय होता है। अतः डरती डरती धीरे धीरे रखती हूँ, किन्तु आपका अंग मार्दव फिर भी चित्त में संशय डाल ही देता है कि कहीं कदाचित् कुछ आघात न पहुँच गया हो। ऐसा विचार कर हृदय और भी विकल हो उठता है।

मेरी यह व्यथा विद्युत की भाँति धावित होकर, मानुषी, देवी और गान्धर्वी प्रभृति तीनों लोकों की अङ्गणाओं का पातिव्रत्य धर्म्म भङ्गकर, उन्हें आपकी माधुरी की ओर आकर्षित करने लगती है। इस दशा को देखकर मुझे न तो दूर, न समीप, न निज रूप, न आपके रूप तथा न किसी अन्य वस्तु का भान रह जाता है।

अतएव हे श्रीप्राणनाथ कृपया निज माधुर्य्य प्रभावातिशय्य से कैवल्य प्राप्त मेरे हृदय को शीतल कीजिये।

श्रीप्राणप्रियतम जू का वचन श्रीसर्वेश्वरीजी के प्रति—

हे प्रियतमे! घबड़ाओ नहीं। मेरा हृदय माञ्जिष्ठ राग की भाँति तुम्हारी रूप-माधुरी में तल्लीन है। जिस समय तेरे मुखचन्द्र सुधापान से मैं वञ्चित रहता हूँ, उस समय की विकलदशा का बर्णन मेरी कल्पना के बाहर है। अब धीरज रखो और निज कोमल सुखद अंग स्पर्श से मेरी व्यथित अन्तरात्मा को शान्ति प्रदान करो।

(यह कह कर अपने गले का भूषण प्यारी के गले में डालना)

* व्यास गान दोहा *

यहि विधि निज निज भाव से, पिय सँग रँग रम केलि ।
करत प्रशंसा भाग्य की, हम सम अपर न केलि ॥
यहि विधि रास विलास में, जस जस जेहि मन चाह ।
तस तस पीतम सुख दियो, समझहु दच्छिन नाह ॥
पुनि प्रकास सब लीन भे, रघुनन्दन तन माह ।
पुनि हिलिमिलि गावन लगे, सखियन जुत सिय नाह ॥

(इति* दच्छिण नायक लीला)

* श्रीप्राणप्रियतम जू का गान *

(राग देश)

किसोरी तेरे नयना सनेही हम से नेह लगाय ।
तन मन धन सब चोरि हमारो, नयनन रहे समाय ॥
वदन सु पूरन चन्द निरखि मेरे, लोचन रहे लुभाय ।
इक टक ह्वै निस दिवस पियारी, चितवत हौं मनलाय ॥

---

*नायिकास्वप्यनेकासु तुल्यो दच्छिण उच्यते ।

अर्थात्—अनेक नायिकों में जिसका सबके प्रति एक समान प्रेममय वर्त्ताव हो, वह दक्षिण नायक कहाता है । किन्तु अन्य नायिकाओं में लम्पट रहने पर भी दक्षिण लक्षण सम्पन्न नायक सर्व प्रधान महिषी में गौरवमय प्रेम आदि यथापूर्व रखता है । यथा—

'यो गौरवं भयं प्रेम दाच्छिण्यं पूर्व योषिति ।
न मुञ्चत्यन्य चित्तोऽपि ज्ञेयोऽसौ खलु दच्छिणः ॥'

जनक लड़ैती राज कुँवरि तुव, वदन सुधा रस पाय।
नहिं अघाति रसना सुनु प्यारी, ताको जतन बताय ॥
पीन पयोधर परसि सुभट मन, होत सिथिल श्रम पाय।
तदपि प्रचारि प्रचारि मिलन को, करत मनोरथ धाय ॥
प्रानहुँ ते प्यारी सुकुमारी, मैं तुझ पै बलि जाय।
सीते सीते सदा रटत हौं, 'रसमाला' उर लाय ॥

* श्रीप्राणप्यारी जू का गान, ठुमरी *

राज कुँवर मन मोहि लियो, मैं परी रूप के ख्याल री।
क्रीट मुकुट मकराकृत कुंडल, चितवनि करत विहाल री ॥
अलकावलि नागिनि सी दुहुँ दिसि, डँसो चहत जनु हालरी।
गोल कपोल तमोल भरे मुख, विहँसनि उर विच साल री ॥
सुभग बुलाक पीक मुख गेरनि, चित चोरन सुनु बाल री।
'रसमाला' उरझी नहि सुरझै, फँसी रूप के जाल री ॥

* श्रीप्राण प्यारे का गान *

(*रागिनी जाजवन्ती*)

प्यारी जू मुसकनि में कछु कीन ॥
छम छम छमकत नटत सखिन में,
दृगन के कोर में हरत मन मीन।
उरज उतंग प्यारी चलत उतंग जब,
मदन के जोर में कँपत तन तीन ॥

कटि पर कर धरि मुख चमकावत,
भौंह की मरोरनि में सरवस लीन ।
'नवलबिहारी प्रिया' मोहन मोहत,
उरज गहत हिय हिय बिच दीन ॥

* श्रीप्राण प्यारी जू का गान, राग देश *

रंगीले राज सुवन तोहि राखौंगी उर लाय ।
करिहौं सफल मनोरथ मनके, वदन सुधा रस पाय ॥
चुपरि सुगन्ध अतर सों जुलफैं, सुमन माल पहिराय ।
रचि बीरी निज करन खवैहौं, वदन निरखि चित लाय ॥
केसर मलय कपूर अगर घसि, सुमन हार पहिराय ।
'रसमाला' पिय कठिन कुचन सों, देहौं आज हराय ॥

* सखियों का गान, ठुमरी *

(गारा)

चंचल चपल चतुर नट नागर, मोहि लिया मन मेरा री ।
है छलिया छल बल बहु जानत, इत उत फिरत अनेरा री ॥
जुलफैं वदन रहत छुटकाये, मारत बाँके नैना री ।
बीरी अधरन लाल बनाये, बोले मधुरे बैना री ॥
मोतिन की गलमाला पहिरे, पीताम्वर उपरैना री ।
'रसमाला' यह स्यामल मूरति, बसी रहत उर ऐना री ॥

❋ राग नट ❋

यह छोटे ऐसे छैला के कहर नैना ॥
छम छम छमकत चलत सखिन में,
मंद मुसकनि में जहर सैना।
कटि लचकावै जब किंकिनी बजावे हो,
नूपुर झनक में अजब चैना ॥
भाव को बताय जब लेत मीठी तान हो,
मदन लहर दे मधुर बैना।
'नवलबिहारी प्रिया' पिया की मधुर छवि,
सियाजी के हिया में करत ऐना ॥

❋ सखियों का गान, दादरा ❋

सइयाँ पीरे पिताम्बर वारे, दसरथ राज दुलारे।
जुलफैं कुटिल नयन घुमरौंहैं, क्रीट मुकुट सिर धारे॥
बीरी वदन हँसनि रति भीनी, अधर बिंब अरुनारे।
कुंडल हलक बुलाक झलक लखि अमित मदन मद गारे॥
गोरी माय पिता रँग गोरे, तुम ऐसे कस कारे।
'रसमाला' यह जानि भये तुम, सिंगी रिषि के सारे॥

❋ सखियों का गान ❋

राग शंकरा (धीरा मध्या उदाहरण)

हौ तुम स्याम बड़े चितचोर ॥

हम सी भोरिन पर करि टोना ।
छलत फिरत नित राज किसोर ॥
मृदु मुसुकाय बचन कहि मीठे,
करि स्वारथ अपनो रस बोर ।
जात चले पिय औरन के घर,
देत हमहि पुनि दरसन भोर ॥
को करिहैं बिस्वास तुम्हारे,
समुझि रावरे गुन गन जोर ।
अस कहि चितय हँसी 'रसमाला',
निरखत मुख छवि दृग के कोर ॥

※ व्यास गान दोहा ※

सिंहासन राजे तदा, नवल लड़ैती लाल ।
आस पास सेवा सजे, मुख्य सखिन की माल ॥
दोउ मिलि पासा※ खेल में, होड़ परस्पर राख ।
जो जीते सो वार इक, अधर अमी रस चाख ॥

※सम्भोग श्रृङ्गार के विविध प्रकार में द्यूत क्रीड़ा का प्रमुख स्थान है ।
संभोग प्रकार—

'ते तु सन्दर्शन जल्पः स्पर्शनं वर्त्मरोधनम् ।
रासा शोकवन क्रीड़ा सरस्वाद्यम्बु केलयः ॥
नौखेला लीलया चौर्यं घट्टः कुञ्जादि लीनता ।
मधुपानं वधूवेशधृतिः कपट सुप्तता ॥
विम्बाधर सुधा पानं संप्रयोदयो मताः ॥

श्रीप्राणप्रिया जू—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू! आज मेरे साथ आपका पासे का खेल हो।

श्रीप्राणप्रियतम जू—

हे प्राणप्यारी जू! बाजी क्या रखी जाय?

श्रीप्रिया जू—

हे प्राण प्रियतम जू! जो जीते वह एक बार अधरामृत रस का पान करे।

*** व्यास गान दोहा ***

पिये जीते प्यारी अधर, पान कियो दो बार।
प्यारी भौंह चढ़ाय कै, तब बोली फटकार॥

(प्रियतम जीत लेते हैं। और श्रीप्रिया जू का अधर दो बार पान करते हैं, इस पर प्यारी जू का वचन—

हे प्यारे, ऐसा अन्याय आप क्यों करते हैं? बाजी तो एक ही बार की थी, दो बार अधर पान क्यों किया?

अर्थात्—अङ्गावलोकन, प्रेम संलाप, रसाङ्गों का स्पर्श, मार्ग रोकना, श्रीअशोक वन की रासादि क्रीड़ाएँ, सरयू आदि सरित सरोवरों का जल विहार, नौका जल विहार, मधुर लीला रस वर्द्धिनी चोरी, दधि दानादि कर ग्रहण, कुञ्जादि में अन्तर्ध्यान हो जाना, मादक उन सबों का पान, वधूवेश धारण, कपट-शयन, अधर पान आदि सम्भोग के प्रकार हैं।

*** सोरठा ***

बोली पगी सुप्यार, प्यारी सुख रस में रँगी ।
सुनिये प्रान अधार, दसा जो मम सम्प्रति भई ॥

*** दोहा ***

मंद मंद मुसकान जुत, तव मुख कंज निहार ।
मन हो रहा बेहाथ है, मेरे प्रान पियार ॥

श्रीप्राणप्रिया जू का सम्वाद—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू ! आपका मंद मंद मुसकान युक्त मुखारविन्द, प्रेम भरी चितवनि युक्त नयन, सुरतानन्द वर्द्धक वक्षस्थल, तथा विविध रस केलि कथा सुधा से रंजित रसना- इन सबों के द्वारा बार बार आघात पाकर मेरा हृदय बेहाथ हो रहा है । मेरी जो दशा हुई सो तो हुई ही, परन्तु मेरी इस व्यथा का संचार मेरी प्यारी सखियों के हृदय में किस कारण से हो रहा है, सो कुछ समझ में नहीं आता ।

इधर देखिये कोई सखी अपने ओठ को चाट रही है । कोई अपना शिथिल केश पास सम्हाल रही है । कोई अपने शिथिल नीवीबंधन को कस रही है । कोई अपने चंचल वक्षोज को आच्छादित कर रही है । कोई चक्र की भाँति घूर्मित हो रही है । किसी किसी की वाणी रुक गई है तथा किसी के मुखादि अङ्गों पर वैवर्ण्य छा गया है ।

* व्यास गान दोहा *

प्यारी बानी रस भरी, सुनि प्रीतम हरषान ।
प्यारी प्रति बोले सहित, मंद मंद मुसकान ॥
प्यारी तेरे अंग के, रूपादिक गुन जोय ।
आस्वादन छन छन करौं, तृप्ति नेक नहिं होय ॥

श्रीप्राणप्रियतम जू—

हे श्रीप्राणप्रिया जू ! आपके रूप, लावण्य, सौन्दर्य तथा रसकेलि कौशल का माधुर्य ही ऐसा मदनोत्मादक है कि जिसके नित्य आस्वादन करते रहने पर भी, मैं सतत अनास्वादक सदृश्य अतृप्त बना रहता हूँ। तब भला आपकी सखियों पर इसका प्रभाव पड़ने में क्या आश्चर्य है? क्योंकि ये सब तो आपकी नित्य सहचरी हैं। केवल इन्हीं की यह दशा हुई हो सो नहीं, इस सम्बन्ध में इस समय मुझसे लीला देवी नाम्नी सखी ने कहा है कि श्रीप्रियाजी से आपके अद्वैत प्रेम भाव के कारण एवं रस प्रभाव से प्रभावित होकर; महेश्वर की अर्द्धाङ्ग स्वरूपा गिरिनन्दिनी, सख्य के कारण नारायण की वक्षस्थिता लक्ष्मी, वैदग्ध्य के कारण सरस्वती, सौभाग्य के हेतु श्रीप्रिया जू की अंशभूता एवं आपकी अंशभूता श्रीकृष्ण प्रिया सत्य-भामा, ऐश्वर्य के हेतु रुक्मणी और माधुर्य्य के हेतु राधा प्रभृति अति दूर देश स्थिता होने पर भी सर्वदा अतिशय क्षुभित होती रहती हैं।

अतः आपसे मेरी बार बार प्रार्थना है कि अब अधिक विलम्ब न करके, निज मधुर सौरभ पूर्ण अधरामृत दान से मुझ परमातुर निज बच्चाश्रित को प्रफुल्ल-हृदय कीजिये।

❋ व्यास गान दोहा ❋

अधीरूढ़ मादन रँगी, वानी अति रसकारि।
वदति प्रिया प्रति प्रियतम, रसिक जियावन हारि॥
तब बोले रसिकेस जू, प्यारी प्रति मुसकाइ।
गुप्त भेद वह कौन है, मुझसे भी जु छुपाइ॥

श्रीप्रिया जू—

हे प्राणेश्वर! मेरे हृदय में एक गुप्त भेद बहुत दिनों से उथल पुथल मचा रहा है।

श्रीप्रियतम जू—

हे श्रीप्राणेश्वरी जू! वह कौन सा भेद है, जो अब तक मुझसे भी गुप्त है?

श्रीप्रिया जू—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू! आप ही से तो वह गुप्त रखने योग्य है।

श्रीप्रियतम जू—

हे श्रीप्राणप्यारी जू! भला ऐसा अन्याय क्यों?

श्रीप्रिया जू—

हे प्राणेश्वर! अन्याय नहीं, प्रत्युत् उचित न्याय है।

श्रीप्रियतम जू—

हे प्राण वल्लभे! भला यह कैसे?

श्रीप्रिया जू—

हे प्रियतम ! क्योंकि आप कठोर हृदय एवं सतत लोभ ग्रस्त हैं ।

श्रीप्रियतम जू—

हे प्राण प्रिये ! तो भला इसी भय से मुझ से वह भेद आप छिपाती हैं ?

श्रीप्रिया जू—

हे प्राणप्रियतम ! इससे दूसरा भय ही मुझे कौन सा होगा ?

श्रीप्रियतम जू—

हे श्रीप्यारी जू ! यद्यपि यह दोष मुझ में नहीं है, तथापि आपके कथनानुसार यदि हो भी तो, मैं आज से उसे नित्य के लिये छोड़ने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर रहा हूँ । यदि प्रतिज्ञा भंग करू, तो जैसी आपकी इच्छा हो, वैसा दंड देंगी और मुझे वह सहर्ष स्वीकारय्य होगा ।

श्रीप्राणप्यारी जू—

हे श्रीप्राणप्यारे ! बड़ी अच्छी बात है । तब मैं आपको कारागृह में रुँधकर अस्त्राघात प्रभृति से जैसी मेरी इच्छा होगी, दंडित करूंगी ।

श्रीप्राणप्यारे जू—

हे प्रिये ! अच्छा, तो अब विलम्ब क्या है ? कहिये ।

श्रीप्यारी जू—

हे श्रीप्राणप्रियतम जू ! अच्छा, प्रेम से श्रवण कीजिये । कहती हूँ । मैंने एक जोड़ा चक्रवाक पक्षी पाला है ।

श्रीप्राणप्यारे जू—

हे श्रीप्राणवल्लभे ! अच्छा तो, मेरे नीलोत्पल उद्यान में उसे सानन्द भ्रमण करने दीजिये ।

श्रीप्राणप्यारी जू—

हे प्राणप्यारे ! नहीं नहीं । उत्पल का विकाश तो रात्रि में होता है और चक्रवाक की प्रकृति दिन में भ्रमण करने की है । अतः विरोधी उत्पल के साथ मैं अपने प्रिय चक्रवाक को कैसे रहने दूं ?

श्रीप्राणप्रियतम जू—

हे प्रिये ! अच्छी बात है । यदि विरोधी से भय है, तो मित्र के साथ रहने दीजिये ।

श्रीप्राणप्रिया जू—

हे प्राणनाथ ! वह मित्र कौन सा है ?

श्रीप्राणप्यारे जू—

हे प्रियतमे ! वह मित्र रक्ताब्ज है, जो कि मेरे पास सतत रहने वाला है । अतः आप सानन्द उसे इसमें छोड़ दें, किन्तु इतना अच्छी तरह स्मरण रखें कि उसका विरोधी रक्तोत्पल जो आपही के पास है, उससे रक्षा करने का यत्न करें । अन्यथा वह उसे यथेष्ट भ्रमण करने में बाधा डालेगा ।

श्रीप्राणप्रिया जू—

श्रीप्राणप्रियतम जू ! बहुत अच्छा । ऐसा ही करूंगी ।

❋ व्यास गान सोरठा ❋

सुनि प्यारी रस वैन, प्रियतम निज करकंज को ।
प्यारी अँग रस लैन, बारम्बार बढ़ावई ॥

* व्यास गान दोहा *

तब प्यारी कर कमल से, बारम्बार हटाय ।
दोउन के रस खेल पै, सखियन बलि बलि जाय ॥
पिय प्यारी रस केलि की, क्रिया देखि सुखदानि।
आनँद भरी हुलास में, हँसै सबै रसखानि ॥
व्यंग भरी वानी तबै, चन्द्रकला मुसकाइ ।
सखियन प्रति बोलति भई, सखी देखु भरि भाइ ॥
मित्र मित्र से लूटिवो, अरु विरोधि से त्रान ।
देखन को सुविचित्रता, मिली आज ही जान ॥
लोभी और सुनिर्दयी, प्यारी तुझे बताय ।
सो तुम पिय प्रत्यक्ष ही, रसकारी दिखराय ॥

(श्रीप्रियाप्रियतम जू की रसमयी वार्त्ता के पश्चात् श्रीप्रियतम जू श्रीप्रिया जू के वक्षस्थल की ओर हाथ बढ़ाते हैं। श्रीप्रिया जू बारम्बार निवारण करती हैं। इस पर सखियाँ हँस रही हैं ।

श्रीसर्वेश्वरी जू का सम्बाद—

हे सखियो ! मित्र के द्वारा मित्र का लूटा जाना तथा विरोधी के द्वारा रक्षा होना, यह बिचित्रता हमें आज ही देखने को मिली है।

हे श्रीप्राणप्रियतम जू ! श्रीप्रिया जू ने आपको लोभी और निर्दयी बताया, उसे आपने प्रत्यक्ष ही करके दिखा दिया ।

* व्यास गान दोहा *

सुनि बानी सानी सुरस, चन्द्रकला उदगार ।
बोले प्रियतम जू सुनो, सखियन की सरदार ॥
दोषारोपन मोहि पर, जो तुव प्यारी कीन्ह ।
तुम्हरी स्वामिनि ही सकल, मुझको वे सब दीन्ह ॥

श्रीप्राणप्रियतम जू का वचन श्रीसर्वेश्वरीजी के प्रति—

हे श्रीचन्द्रकले ! इन दोषों का कारण मैं आपकी स्वामिनी को सुनाता हूँ। आप भी ध्यान देकर सुनें।

श्रीप्रियतम जू का वचन श्रीप्रियाजी प्रति--

हे प्रिये ! आपने निज सौन्दर्य सुधा सिन्धु द्वारा मेरे चित्त रूपी पर्वत को डुबा रखा है। आपकी रूप-माधुरी द्वारा मेरे नयन, नर्म परिहास द्वारा कान, कोटि चन्द विनिन्दित शीतलाङ्ग द्वारा वक्षस्थल, अंग सौरभ सुधा द्वारा नासिका, और अधरामृत द्वारा जिह्वा आकृत हो रही है। मेरा मन रूपी एक अश्व इन पाँचों चोरों के द्वारा पांच ओर खींचा जाता है। सो यह निर्दयता है या सदयता ? यह आप अथवा आपकी सखी मुझे समझा दें ।

* व्यास गान दोहा *

अति उद्धत है अश्व तव, चलै निरंकुस चाल ।
औद्धत्व के हेतु ही, दंड मिला तत्काल ॥
अस कहि प्यारी पीय के, गले हस्त दोउ डार ।
परिरंभन करती भई, और क्रिया रसदार ॥

श्रीप्रियाजी का वचन श्रीप्राणप्रियतम प्रति—

हे प्राणप्यारे ! आपका अश्व अत्यन्त उद्धत है। इस औद्धत्य के कारण ही आपको दण्ड मिला है। अतः अश्व को उच्छृङ्खल बनाकर छोड़ने तथा पूर्व कृत प्रतिज्ञा के भंग रूप अपराध के कारण पूर्व निर्धारित कारागृह को अब आप सहन कीजिये।

(ऐसा कहकर प्रियाजी प्रियतम के गले में दोनों हाथ डालकर बैठ जाती हैं)

* व्यास गान सोरठा *

अस अनन्द को देख, सखी वृन्द गावै नटै ।
जीवन को फल लेख, दोउन पै वलि वलि गई ॥

* सखियों का गान (रागिनी बरवा *

रँग भीजे तोरी वलि वलि जाऊंगी ॥

लोचन ललित वलित मनसिज मद,
निरखि निसान बजाऊंगी ।

प्रान प्रिया प्रिय अंस सुभुज छवि,
दृगन पिवाय लोभावोंगी ॥

आस पास सहचरी भरी रस,
सुखमा सहर समावोंगी ।

'युगल अनन्यअली' पल पल पर,
उर वर वनज खिलावोंगी ॥

✻ सखियों का गान ✻

(राग दरबारी)

सजीवन जीवन जुगल किसोर ।
रैन ऐन मद नैन चैन चय, चखत चतुर चितचोर ।
हँसत हँसावत होस जोस बिन, बोस लेत रस बोर ॥
सुधि बुधि विसद विहाय छाय छवि, होइ रहे चन्द चकोर ॥
आस पास सहचरी सोहागिन, सिखवहिं मदन मरोर ।
'युगलअनन्यअली' रसिया दोउ, उरझि रहे निसि भोर ॥

✻ सखी गान ✻

(गौड़ मलार)

जादू भरी स्याम तोरी नजरिया ॥
जेहि चितवत तेहि बस करि राखत ।
सुन्दर स्याम वान धनु धरिया ॥
जुल्फन जुत मुख चन्द्र प्रकासित,
नासा मनि लटकन मन हरिया ।
'जुगलप्रिया' मिथिलापुर वासी,
फँसे जाल छवि मनहुँ मछरिया ॥

✻ सखी गान ✻

(नट मलारी)

खाले बदाम छोहारा सँवलिया ॥

श्रीफल दाड़िम नारंगी देऊ, देवो गुलाब फुहारा ।
किंसुक कली से पूजो गुलाब को, लेवो वलैया तोहारा ॥
सुमन कुञ्ज में केलि अनूपम, देवो ओढ़ाया ओहारा ।
'नवलअली' रस पीवो लली सँग, प्रान प्रिया के जोहारा ॥

❋ सखी गान, राग टप्पा ❋

यह प्यारी छवि पर वारियाँ ।
गौर स्याम जोरी मन भावन, सोइ हिये बिच धारियाँ ॥
जनकलली रघुनन्दन दोऊ, और सखी सँग सारियाँ ।
'रसिकअली' के यह मन भावत, और लगे सब खारियाँ ॥

❋ सखी गान, ठुमरी ❋

मोपै रस की चितवनि डारी, हो दसरथ जू के लाल ॥
कटि पीताम्बर धोती सोहै, लाल पाग सिर न्यारी ।
तापर तुर्रा अधिक मनोहर, मोतियन झालरदारी ॥
विहरत फिरत प्रमोद विपिन में, स्याम वरन मन हारी ।
नासा मनि की लटक चाल पर, 'जुगलप्रिया' बलिहारी ॥

❋ विसर्जन आरती पद (रागिनी सोहनी) ❋

करत आरती सरद समय की ॥
सरद कपूरि पूरि वर थारन ।
जगति जोति सुख होत गभय की ॥
चमर छत्र छबि छाय रही सब ।
सहचरि गाय बजाय किलोलैं ॥

नचत नवल नव जल पट तारति ।

वारति तन मन जै धुनि बोलैं ॥

नव नव गुननि रिझाय भिजाये ।

हर्षि जुगल मन सकल प्रहर्षी ॥

जयति 'प्रसाद निवास' अली सब ।

लै बलिहारि सिया जू वर की ॥

(राग देश)

रंग भरी जोरी सदा चिर जीवो ।

सदा विहार करो रँग मन्दिर, रंग किसोर किसोरी ॥

सदा सुहागिन के अनुरागनि, रँगे रहो बड़ भाग बढ़ोरी ।

पिय के प्रान बसो सिय सुन्दरि, सिय मन स्याम बसोरी ॥

सिय मुखचन्द्र सुधारस द्रवो नित, पिय जूकी आँखि चकोरी।

पियजूकी चाहसो चात्रिकलों रहो, सियजूकी मयास्वाति बरसोरी

हमरे नैन प्रान के सर्वस, अधिक अधिक सुख रस सरसो री ।

'कृपानिवास' उपास महल की, टहल लग्यो सो लगोरी ॥

❋ शयन महल प्रस्थान, राग विहाग ❋

महल पधारी नैना आलस भरे ।

लोचन फेरि उठे हँसि नागर, मनमथ पाँय परे ॥

चले झमकि मद मदन घूमते, सखि जन अंसनि बाँह धरे ।

बरषत सुमन सुगंध कुहागनि, गान करत सुर सों मधुरे ॥

छूटति छवि की छटा अटा चढ़ि, सेज भवन उघरे ।

'कृपानिवास' श्रीजानकी बल्लभ, सैन रैन सुख ढरे ॥

॥ इति श्रीमती रसमोदलता विरचित महारास प्रकरण ॥